योगविद्या

वर्ष 12 अंक 6
जून 2023

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरि: ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योग विद्या मासिक पत्रिका है।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, फरीदाबाद, 121007, हरियाणा में मुद्रित।

© Bihar School of Yoga 2023

उपयोगी संसाधन

वेबसाइट :

www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

एप्प : (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)

Bihar Yoga
APMB
YOGA (अंग्रेजी पत्रिका)
YOGAVIDYA (हिन्दी पत्रिका)
FFH (For Frontline Heroes)

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं अन्दर के प्लेट:
स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

सत्यम् के प्रति उनके गुरु, स्वामी शिवानन्द जी के उद्गार

सत्यम्! कठोर परिश्रम करो, तुम्हारी शुद्धि होगी। तुम्हें प्रकाश खोजने की जरूरत नहीं, वह तुम्हारे भीतर से प्रस्फुटित होगा।

– स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित

मुद्रक – थॉमसन प्रेस इण्डिया लिमिटेड, 18/35 माइलस्टोन, दिल्ली मथुरा रोड, फरीदाबाद–121007, हरियाणा

स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या

वर्ष 12 अंक 6 जून 2023
(प्रकाशन का 61 वाँ वर्ष)

विषय सूची

इस विशेषांक में श्री स्वामीजी द्वारा पश्चिमी भारत में दिये सत्संगों का संकलन है

4 चिन्ता-निराकरण के उपाय
11 दु:ख और उसके कारण
14 योग का इतिहास
16 कुण्डलिनी शक्ति का जागरण
31 कल्पतरु की छाँव में
39 हठयोग की आवश्यकता
46 अजपाजप साधना

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिक:। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

चिन्ता-निराकरण के उपाय

मैं एक आदमी को जानता हूँ जो बहुत अच्छा था, बहुत शांति से अपने ऑफिस जाता था, बड़े अच्छे ढंग से अपने परिवार में रहता था, बाल-बच्चों के साथ बहुत अच्छी तरह बात करता था। दोस्तों से भी मिलता था, ऐसा लगता था कि बड़ा संतुलित आदमी है। एक दिन वह बिल्डिंग की आखिरी मंजिल पर खड़ा था और वहाँ से उसने समुद्र की लहरों को देखा, जो बड़े जोर से आ रही थीं। वह उन लहरों को देखता रहा, देखता रहा। अचानक उसके मस्तिष्क में क्या हो गया कि उसके बाद से उसमें कुछ असंतुलन आ गया। जहाँ कहीं भी लड़ाई होती, उसको भय लगने लगता और वह चिल्लाने लगता। लिफ्ट से ऊपर नहीं जाता था। यदि लिफ्ट से जाना जरूरी होता, तो वह लिफ्ट को जोर से पकड़ लेता, आँखों को मींच लेता। जब बड़े-बड़े भवनों में जाता और उनके गलियारों से होकर जाना पड़ता, तो वह सीधे नहीं जाकर दीवार से सट-सटकर जाता।

मुझसे उसकी मुलाकात हुई। मैंने कहा, 'तुम अत्यधिक चिन्ता से पीड़ित हो।' उसने कहा, 'मुझे तो कोई चिन्ता नहीं है। मेरे बाल-बच्चे बहुत अच्छे हैं।' मैंने कहा कि चिन्ता मनुष्य के मन का स्वरूप है। रेलगाड़ी पकड़ते समय, सिनेमा का टिकट लेते समय, इम्तहान के लिये जाते समय, नौकरी के साक्षात्कार के लिए जाते समय, घर में यदि कोई बीमार हो जाता है, तो उसकी बातें सुनते समय चिन्ता प्रतिक्रिया के रूप में प्रकट हो जाती है। मनुष्य के अन्दर जो व्यग्रता होती है, वह सदा विद्यमान रहती है। इस व्यग्रता को हम धीरे-धीरे बढ़ाते जाते हैं। इस तरह वह व्यग्रता हमारे चैतन्य जीवन का, हमारे मानसिक जीवन का एक अंग बन जाती है। धीरे-धीरे हमारा स्नायुमण्डल, हमारे मस्तिष्क की प्रतिक्रियाएँ, हमारे शरीर के अन्दर के रसायनों की क्रियायें, सब मिलकर चिन्ता को धीरे-धीरे बढ़ाते जाती हैं और हम इससे प्रभावित होते जाते हैं।

हम यह नहीं जानते कि मन के अन्दर उत्पन्न होने वाली थोड़ी-सी व्यग्रता धीरे-धीरे हमारे अन्दर एक प्रकार के स्वभाव, एक आदत, एक विशेष चरित्र को गढ़ रही है। पहले तो कुछ नहीं होता, मगर देखते-देखते उम्र बढ़ती जाती है, साथ-ही-साथ शरीर के अन्दर हॉर्मोनों की क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं में परिवर्तन आते जाते हैं। जीवन की परिस्थितियाँ बदलती हैं। उस समय कभी-

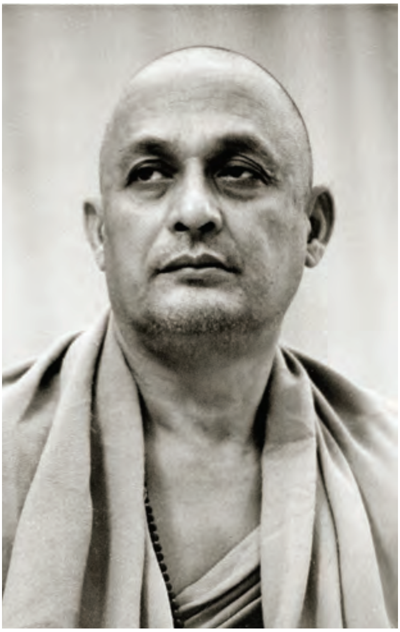

कभी बढ़ी हुई चिन्ता हमारे भौतिक जीवन में प्रकट होने लगती है। यह है अशांति। इस बात का ध्यान रखें कि मनुष्य का जो वास्तविक स्वरूप है, वह केवल शांतिमय और आनन्दमय है, किन्तु जीवन के सम्बन्धों, जीवन के कार्य-व्यापारों को लेकर हमारा मन अशांत होता है, वह निरन्तर प्रतिक्रिया करता रहता है। वही प्रतिक्रिया अशांति के रूप में हर आदमी के जीवन में आती है। मनुष्य के पास अशांति को दूर करने का कोई नियम नहीं है और न ही इस अशांति के कारणों को हटाने का कोई रास्ता है। जब तक मनुष्य है, तब तक उसका मन है, उसकी परिस्थितियाँ, आशाएँ, अपेक्षाएँ, उपलब्धियाँ तथा महत्त्वाकांक्षाएँ हैं और उसको इन सबके साथ-साथ अपने मन का भी सामना करना पड़ेगा। इसीलिए हम लोगों के योग शास्त्र में दो क्रियाओं का वर्णन है। एक क्रिया को कहते हैं अन्तर्मौन और दूसरी क्रिया को कहते हैं मंत्रयोग।

आप यह नहीं समझें कि मैं किसी धर्म के बारे में आपको बतला रहा हूँ। मैं अब तक जिस विषय पर विचार प्रकट कर रहा हूँ, वह विशेषकर चिन्ता के बारे में है, जिसके द्वारा मन इतना उद्वेलित हो जाता है कि मनुष्य अपना संतुलन खो बैठता है और भ्रम में पड़ जाता है। उसका यह भ्रम स्वप्न, जागृति, सम्बन्धों, क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं में भी विद्यमान रहता है। अगर आप चिन्ता पर ध्यान देंगे, तो आपको लगेगा कि चिन्ता को दूर करने का उपाय तो हमको मालूम है। लेकिन अनजानी चिन्ता के बारे में हमें बिल्कुल मालूम नहीं है। चिन्ता और व्यग्रता के जिन कारणों को हम जानते हैं, वे बहुत कम हैं। मनुष्य की चेतना प्रहरी की भूमिका में है और मनुष्य के मन के अन्दर व्यग्रता और चिन्ता के जो कारण छुपे हैं, वे न तुमको मालूम हैं, न हमको मालूम हैं, न किसी और को मालूम हैं। ये बिना पहचानी चिन्ताएँ हैं। इन्हें आपको

जानना है, पहचानना है, नहीं तो आपको इनका फल भुगतना पड़ेगा। जब यह अनजानी चिन्ता आपके जीवन में प्रकट होगी, तब आप मनोचिकित्सक के पास जायेंगे या ओषधि विशेषज्ञों के पास जायेंगे। वे आपको थोड़ा आराम जरूर देंगे, मगर उसे दूर नहीं कर पायेंगे।

कई लोगों को मैंने देखा है, जिन्हें मृत्यु का भय रहता है। तुमको मालूम भी नहीं पड़ेगा कि वह भय अन्दर छुपा हुआ है। मृत्यु का अज्ञात भय जब कभी व्यक्ति की चेतना से टकराता है, तो उसके लक्षण बाहर व्यवहार में प्रकट होने लगते हैं और लोग बोलते हैं, इसका तो दिमाग खराब हो गया। क्यों खराब हो गया? इसलिए कि उसकी बीवी ठीक नहीं होगी, लड़की ठीक नहीं होगी, व्यापार ठीक नहीं होगा। यह नहीं कहते कि उसके अन्दर एक अनजानी चिन्ता उसे सता रही है।

अन्तर्मौन

शरीर मन पर और मन शरीर पर असर करता है। इसीलिए हम लोगों के योगशास्त्र में जो अनेक क्रियाएँ हैं, उनमें मुख्यतः दो क्रियाओं के नाम आते हैं। एक क्रिया है अन्तर्मौन। अन्तर्मौन की क्रिया में हम समय-समय पर अपनी चेतना को छोड़ देते हैं, मन के दरवाजे खोल देते हैं, झरोखों को खोल देते हैं और इन्द्रियों के द्वारा उत्पन्न होने वाले अनुभवों को, मन के अन्दर उत्पन्न होने वाले सहज विचारों को आने देते हैं, उन्हें रोकते नहीं हैं। यह उन लोगों के लिए है, जिन लोगों ने अपने अन्दर चिन्ता को उत्पन्न किया है। अगर वे लोग मंत्रयोग का या त्राटक का सहारा लेते हैं, तो जो चिन्ता विद्यमान है वह विस्फोट कर सकती है, करती भी है। यह विस्फोट सब लोग सहन नहीं कर पाते हैं। चेतना का जो विस्फोट होता है, वास्तव में वह संस्कारों का विस्फोट होता है, अनेकानेक भावनाओं का विस्फोट होता है। उसको बहुत-से लोग सम्हाल नहीं सकते हैं। इसलिए सबसे पहले उनको अन्तर्मौन कराते हैं। अन्तर्मौन में धीरे-धीरे अन्दर के संस्कारों को, वृत्ति के स्वरूप को बाहर निकालते हैं।

सबसे पहले इन्द्रियाँ माध्यम बनती हैं। जैसे कान शब्दों को ग्रहण करते हैं। आँखें रूप को ग्रहण करती हैं, नासिका गन्ध को ग्रहण करती है, जीभ स्वाद ग्रहण करती है, त्वचा स्पर्श को ग्रहण करती है। पाँचों इन्द्रियाँ अपने-अपने विषयों को ग्रहण करती हैं। केवल ग्रहण नहीं करती हैं, बल्कि अन्दर इन विषयों के जो संस्कार पड़े हुए हैं, उनको बाहर लाती हैं। जैसे एक शिष्य

गुरु के पास जाता है, तो गुरु उसको बोलते हैं, 'तुम्हारे पैर में काँटा लग गया था क्या?' 'लगा तो था।' 'क्या हुआ?' 'दर्द हुआ।' 'याद है?' 'हाँ, याद है।' 'अनुभव कर सकते हो? जाओ, पहले अनुभव करो।'

तुम्हारे पैर में काँटा लगा था, तुमको वेदना हुई थी, उस समय तुमको जो अनुभव हुआ, वह अनुभव संस्कार बन गया। उस संस्कार को तुम केवल स्मृति की सतह तक ले जा सकते हो, अनुभव की सतह तक नहीं ला पा रहे हो। जब चोट लगी थी, तब तुमको दर्द हुआ था, मगर उस दर्द का अनुभव अभी नहीं कर पा रहे हो। सामान्य मनुष्य संस्कारों को स्मृति के स्तर तक तो ला सकता है, लेकिन अगर उनको अनुभव के स्तर पर प्रत्यक्ष करना है, तब उसको अन्दर जाना पड़ेगा। उसको अन्तर्मुख होना पड़ेगा। जब वह व्यक्ति अन्तर्मुख होगा, उस वेदना को अनुभव के स्तर पर प्रत्यक्ष करेगा, तब उस वेदना का संस्कार विसर्जित हो जायेगा। यह एक सिद्धान्त है।

इसी प्रकार इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त हुए अनुभव मन को प्राप्त हो जाते हैं। मन को प्राप्त हुए विषय चित्त में स्थानान्तरित होते हैं। चित्त को प्राप्त हुए विषय अगर प्रकट नहीं किये जाते हैं तो वे अहंकार में आकर छुप जाते हैं। जब अहंकार के तहखाने में संस्कार छुप जाते हैं तो वहाँ से उन्हें निकालने में साधक को बहुत कठिनाई होती है। इसलिए मन अशांत रहता है। मन की अशांति का तुम बाहरी कारण खोज रहे हो। किसी की लड़की की शादी में दिक्कत हो रही है, रात-दिन चिन्ता में नींद नहीं आती है। क्यों नींद नहीं आती है? लड़की की शादी करनी है। यह असली कारण नहीं है। कारण तो तुम तैयार करके आये हुए हो। यह केवल उसको उत्तेजित करने वाला है। अगर तुम्हारे अन्दर वह चिन्ता नहीं हो, तो न लड़की की शादी में दिक्कत है, न नौकरी में दिक्कत है, न ही व्यापार में दिक्कत है। पारिवारिक सम्बन्धों की दिक्कत हो, तो भी कुछ नहीं होगा, तुम आसानी से सो सकते हो।

यह जो तुम लोगों ने अपने-अपने अन्दर बारूद का कारखाना छुपा कर रखा है, उसको कैसे निकालना है? एक साथ निकालोगे तो उसमें विस्फोट होगा। इसलिए अन्तर्मौन में पहली क्रिया है इन्द्रियों के विषय का निराकरण। अन्तर्मौन की दूसरी क्रिया है मन के विषयों का निराकरण। अन्तर्मौन में तीसरी क्रिया है मन के विषयों का सृजन। अन्तर्मौन में चौथी क्रिया है मन के विषयों का विसर्जन और पाँचवीं क्रिया है निर्विचार की स्थिति। जब निर्विचार की स्थिति आने लगती है, तब उस समय मंत्र शुरू होता है।

मंत्र का महत्त्व

मंत्र न ईश्वर का नाम है और न ही किसी ईश्वर से सम्बन्धित है। मंत्र शब्द-ब्रह्म है। यह नाद के सिद्धान्त पर आधारित है, जिसको शब्द-ब्रह्म कहते हैं। शब्द लोक-लोकान्तरों में होते हैं। भूलोक, भुवर्लोक, स्वः लोक, अनेक लोकों में शब्द होते हैं। इसको दूसरे ढंग से समझना होगा। स्थूल शब्द भी होते हैं, सूक्ष्म भी होते हैं और सूक्ष्मातिसूक्ष्म भी होते हैं।

नाद अप्रत्यक्ष है, शब्द अप्रत्यक्ष है। जब वह अप्रत्यक्ष शब्द आता है, तो चेतना का मूल स्वर महात्माओं को सुनाई देता है और वही मंत्र कहलाता है। यही मंत्र शक्ति का पुंज बनकर हमारी चेतना को, हमारे मन की सतहों को प्रभावित करता है। हर मंत्र का अलग-अलग महत्त्व होता है। ॐ मंत्र सबसे पहले स्थूल जगत् में पैदा हुआ और उसने मन के स्थूल रूप को प्रभावित किया। उसके बाद वह मंत्र धीरे-धीरे सूक्ष्म होता गया। जैसे-जैसे मंत्र सूक्ष्म होता है, वैसे-वैसे चेतना भी उत्तरोत्तर सूक्ष्म होती जाती है। जब स्थूल मंत्र के स्थूल शब्द पर संधान होता है, तब उसको जप कहते हैं। जप करते-करते जब साधक को कुछ दिखलाई देने लगता है, सुनाई देने लगता है और कुछ अनुभव होने लगते हैं, तब वह मनुष्य के अचेतन का, मनुष्य के कारण शरीर में जमा बारूद के कारखाने का, उसकी नींव का रास्ता होता है। इसलिए मैं साधकों से हमेशा कहता रहता हूँ कि तुम जो जप करते हो और जप करते समय तुमको जिस अनुभव की प्राप्ति होती है, उसके बारे में ज्यादा चिन्ता मत करो। इसके बारे में सारी बातें तो बतला नहीं सकता।

मैं इतना अवश्य जानता हूँ कि शरीर एक नहीं होता। मैं यह भी जानता हूँ कि विचार केवल वही नहीं जिसको मैं जानता हूँ। जिसको मैं नहीं जानता हूँ, वह भी विचार है। मनुष्य स्थूल जगत् में विचार करता है, सूक्ष्म जगत् में विचार करता है और कारण जगत् में भी विचार करता है। मनुष्य स्थूल जगत् में जो विचार करता है, उसको वह मालूम पड़ता है कि मैं सोच रहा हूँ। मगर सूक्ष्म जगत् के विचारों का पता नहीं चलता। भूकम्प के झटके की तरह मनुष्य के अन्दर चेतना का, भावना का विस्फोट होता रहता है। जब हम जप करते हैं, तब ये सब बातें धीरे-धीरे ऊपर की सतह पर आती हैं और भावनात्मक अनुभव के रूप में हम इनको जान पाते हैं। महात्मा लोग इसको आध्यात्मिक अनुभव कहते हैं। मैं इनको संस्कारों का क्षय मानता हूँ, विसर्जन मानता हूँ। जप करते समय जो दिखलाई देता है, सुनाई देता है या तुमको सपने में जो अनुभव होता है, वह तुम्हारे अंदर इस जन्म में विद्यमान है। तुम्हारे माता-पिता से बीज के रूप में तुमको मिला है और जन्म-जन्मान्तरों से तुम्हारे अन्दर बहुत सूक्ष्म रूप में विद्यमान है, कारण शरीर में विद्यमान है, स्थूल और सूक्ष्म शरीर में विद्यमान है। इसको ऊपर निकालना है।

जब हम जप के लिए बैठते हैं, तब हमें कुछ बातों का ध्यान रखना पड़ता है – एक तो मंत्र का और दूसरा मंत्र जपने के ढंग का। आजकल कभी-कभी लोग कहते हैं कि मन में जप कर लो, श्वास में जप कर लो। मैं भी कहता हूँ, मगर जब तक तैयारी पूरी नहीं होगी, तब तक श्वास में जप करने से जिस अन्तर्मुख स्थिति की प्राप्ति होगी, वह आध्यात्मिक नहीं, बल्कि भावनात्मक स्थिति है। अन्तर्मुख होने के पहले बहिर्मुख स्थिति पर नियंत्रण होना चाहिए। कोई एल.एस.डी. लेकर अन्तर्मुख होता है, कोई गांजा-भांग लेकर अन्तर्मुख होता है। कोई जबरदस्ती बंध और मुद्रा लगाकर अन्तर्मुख होता है। ऐसा करना गलत है।

ब्रह्माकार वृत्ति अर्न्तमुख स्थिति की ओर ले जाती है। विषयाकार वृत्ति मनुष्य को इन्द्रियों की ओर ले जाती है। जब तक हम अपने मन को जप के द्वारा संतुलित नहीं करते हैं, तब तक अन्तर्मुख स्थिति नहीं आनी चाहिए। जप करते समय माला का व्यवहार निश्चित रूप से होता है। आसन लगाना चाहिए, आराम कुर्सी पर भी कर सकते हो, मगर जप करते-करते बिलकुल वही स्थिति आयेगी जो कॉम्पोज़ को लेकर आती है। इसको बदल नहीं सकते। लेकिन वह अपना लक्ष्य नहीं है। हमारा लक्ष्य है क्या? फिर सुन लो – अन्दर जाना, कूड़ा-करकट को पहचानना और थोड़ा-थोड़ा करके उसको बाहर निकालना।

संस्कारों का ढेर लगा हुआ है, उन सब को निकाल दो। इसके लिए जप में माला और आसन जरूरी है, साथ ही जोर से बोलकर जप करना जरूरी है।

लोग कहते हैं, वाचिक जप से उपांशु जप सौ गुना शक्तिशाली है, और उपांशु से मानसिक जप सौ गुना प्रभावशाली। लोग आगे कहते हैं कि अजपाजप तो और भी ज्यादा प्रभावशाली होता है, मगर यह नहीं जानते कि हम कितनी व्यवस्था कर सकते हैं। इसलिए जप करते समय प्रारम्भ में साधकों को बोलकर जप करना चाहिए। उसके बाद फिर मुँह से जप करना चाहिए, जिह्वा से। फिर उसके बाद कण्ठ से जप करना चाहिए। उसके बाद अजपाजप करना चाहिए। जप की प्राथमिक अवस्था में चेतना के सिद्धांत नहीं लगाने चाहिए। चित्त की एकाग्रता का सिद्धांत सबसे पहले नहीं आता। केवल मंत्र जप से हमको मतलब है, मंत्र का उच्चारण करना है। मनीराम को भागने दो, जहाँ-जहाँ मन जाता है, जाने दो। लोग कहेंगे स्वामीजी गीता के विपरीत बोल रहे हैं, क्योंकि गीता कहती है – जब-जब मन भागे, तब-तब उसको वापस लाओ –

यतो यतो निश्चरति मनश्चंचलमस्थिरम्।
ततस्तो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत्॥6.26॥

मगर यह अर्जुन से कहा गया था और अर्जुन की समस्या थी स्नायु असंतुलन की। अर्जुन ने कहा –

गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः॥1.30॥

अर्जुन बोला, 'मेरा शरीर काँप रहा है। मेरे हाथ से गाण्डीव धनुष गिर रहा है।' यह अर्जुन का नर्वस ब्रेक डाऊन था। हम लोगों की समस्या दूसरी है। अर्जुन की योग्यता दूसरी थी, हमारी योग्यता दूसरी है। हमको क्या करना है, जप करते समय जब-जब मन भागे, उसको जाने दो। जोर से बोलते रहो – *ॐ नमः शिवाय, ॐ नमः शिवाय, ॐ नमः शिवाय*। जब देखो कि अब मनीराम की उछल-कूद कम हो गयी है, तब उसके बाद मुँह बंद कर लो और जब देखो अब मनीराम बैठ गया है, अब ज्यादा तंग नहीं करता है, तब उस समय मानसिक जप शुरू करो और जब देखो कि अब तो आसन जम गया, तब अजपाजप करो।

– 24 फरवरी 1978, योग सम्मेलन, ठाणे

दुःख और उसके कारण

मनुष्य का दुःख और उसके कारण कितने सच्चे और कितने झूठे हैं, समझ में नहीं आता। हमारे आश्रम में एक कार्यपालक अभियंता संन्यास लेने के लिए आया। उसका नाम स्वामी निश्चलानन्द है। उसको बड़ी विचित्र बीमारी हो गई, जिसे कहते हैं उदासीनता विकार। यह उदासीनता सबेरे से दस बजे तक रहती थी। न पढ़ने का मन करता था, न बैठने का, न खाने-पीने का, न कुछ काम करने का, मन में केवल चंचलता थी। वह जब मुंगेर आश्रम आया हुआ था, तभी इस तरह का हुआ, पहले बिल्कुल भला-चंगा था। बेलफास्ट आश्रम में योग की कक्षायें लेने गया, वहाँ ठीक था, वहाँ के आश्रम में भी उसको कोई गड़बड़ी या विकार नहीं हुआ। जब मुंगेर आया, आसन-प्राणायाम करने लगा, तब उसकी तबियत बिगड़ गई और उसे विचित्र विकार एवं अवसाद होने लगा। महीनों चला, हमने जैसे-जैसे उसको योगनिद्रा कराई, वैसे-वैसे विकार बढ़ता गया और ऐसी स्थिति तक पहुँच गया कि हम उसे अपने आश्रम की ऊपरी मंजिल की छत पर नहीं जाने देते थे। क्या मालूम, क्या हो जाए? सोचे, 'चलो मर जाऊँ' और कूद पड़े। मैंने उसके पीछे एक आदमी तक लगा दिया।

वह संन्यासी मुझसे कहता था कि हमारी योगनिद्रा बंद कर दो। हमने कहा, 'नहीं, तुम जारी रखो।' मेरी समझ में तो सब आ रहा था, पर वह कुछ नहीं समझ पा रहा था। मुझे लग रहा था कि योग निद्रा से सब सफाई हो रही है, मगर कुछ ज्यादा सोचने का समय नहीं मिला। एक दिन की बात है, हमारी तीसरी मंजिल की छत का दरवाजा खुला था। वह सबेरे छः-सात बजे वहाँ घूमने लगा। हमारे आश्रम के आगे-पीछे 'स्वास्थ्य अधिकारी' रहते हैं। ये स्वास्थ्य अधिकारी जगह-जगह पर जाकर अपना काम किया करते हैं। हम लोगों को तो यह सब देखने की आदत है, इससे हम लोगों को चोट नहीं पहुँचती है, पर जब एक यूरोपियन ने सूअर को मल खाते हुए देखा, तो उसकी जबरदस्त प्रतिक्रिया हुई। उसने ऐसा कभी देखा ही नहीं था, क्योंकि हम उसे छत पर जाने ही नहीं देते थे।

हमारे आश्रम में नियम है कि एक बार जो आश्रम से इधर-उधर बाहर गया, फिर हम उसको अन्दर नहीं आने देते हैं। एक बार आश्रम से जाने के बाद दुबारा आने नहीं दिया जाता, चाहे वह जो भी हो। आश्रम से बाहर न साधु को जाने देते हैं, न गृहस्थ को और न ही साधक को। इसलिए बहुत-से लोग डर के मारे

आते ही नहीं, क्योंकि वहाँ समोसा खाने को नहीं मिलेगा, बीड़ी पीने को नहीं मिलेगी। गेट पर ताला लगा देता हूँ और चाबी अपने पास रखता हूँ। हम कहते हैं, 'बेटा, तुम बहुत दिन तक स्वतंत्र थे, अब आश्रमों का बंधन भी सीखो।' इसलिए बहुत लोग आने से डरते हैं। आप लोग भी आइये तो जरा सोच-समझ कर आइये। मैं साबुन लेने के लिए भी बाहर नहीं जाने देता। पूछता हूँ, 'क्यों जा रहे हो, कहाँ जा रहे हो? मुझको दे दो, जो आवश्यक है, मैं मँगा दूँगा।'

उस दिन जब मैंने उसको योगनिद्रा कराई तो उसको एक अनुभव हुआ। उसको बचपन की एक घटना योगनिद्रा में याद आ गई। जब वह छोटा बच्चा था, मछली मारने जाता था। मछली मारने के लिए इल्लियाँ होती थीं। वे डिब्बे में रखी जाती थीं। एक बार वह एक हफ्ते तक मछली मारने नहीं गया, तो इल्लियाँ डिब्बे में बंद रह गयीं। हफ्ते भर बाद वह फिर मछली मारने के लिए जा रहा था, तो उसने डिब्बे में रखी इल्लियों को देखना चाहा। जब डिब्बे को खोला, तो देखा कि छोटी-छोटी इल्लियाँ तितलियाँ बन चुकी थीं, जो डिब्बा खुलते ही उड़कर उसके मुँह की तरफ आने लगीं। वह उस समय केवल आठ साल का छोटा बच्चा था। उसके लिए वह एक झटका देने वाला अनुभव था। यह घटना उसके दिमाग में बैठ गई और केवल यह एक छोटी-सी घटना उसके जीवन में इतने बड़े दुःख का कारण बन गई कि वह अवसादग्रस्त हो गया। अगर योग निद्रा नहीं कराते, तो हो सकता है वह आत्महत्या ही कर लेता।

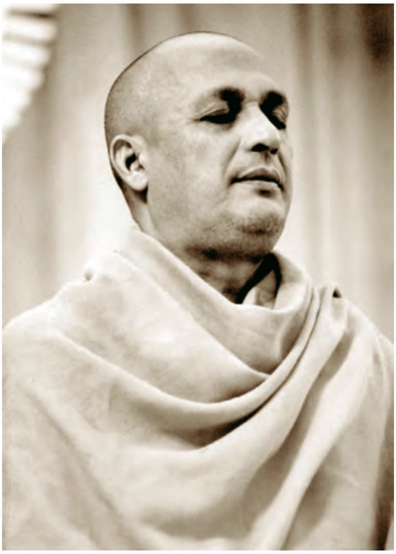

वह उस समय केवल चौबीस-पचीस साल का लड़का था। योगनिद्रा में इस अनुभव के बाद वह ठीक हो गया, अब बिल्कुल ठीक है।

उदाहरणस्वरूप एक घटना बतला रहा हूँ, मगर योगनिद्रा के सम्बन्ध में तो अनेक बातें बतलाने की हैं। कभी-कभी योगनिद्रा की गहन अवस्था में बहुत सुन्दर दृश्य आता है, कभी गंदा दृश्य आता है। इन सब दृश्यों का मनुष्य जीवन की किसी-न-किसी अनुभूति के साथ सम्बन्ध होता है। सीधा सम्बन्ध नहीं, तो अप्रत्यक्ष

सम्बन्ध रहता ही है। उस दृश्य के उपस्थित हो जाने से उससे सम्बन्धित संस्कार का क्षय होता है एवं उस संस्कार का निराकरण हो जाता है।

यह हम लोग अभी समझ नहीं पायेंगे। इसको और अच्छी तरह समझाने के लिए मैं अपने जीवन की एक घटना बतलाता हूँ। सालों पहले की बात बोल रहा हूँ। मुझको शाम होते-होते बड़ा असमंजस लगता था, बड़ी उदासी और बेचैनी होने लगती थी। लगता था, बस, अब सबको कुछ हो जाएगा। मैं लाइट जला कर सोता था, अंधेरे में नहीं सो पाता था और रात को जब बाथरूम में जाता था, तो पूरी लाइट की जरूरत होती थी। अंधेरा मुझको नहीं भाता था। रात में कहीं जाने से मुझे अज्ञात भय लगता था, जबकि मैं डरने वाला आदमी नहीं हूँ। 'बन्दूक छाती में लगा दो और मारो मुझको, क्या रखा है, आखिर कल मरना ही है, तो आज क्या समस्या है' – मैं ऐसी सोच वाला आदमी हूँ, मगर उन दिनों मुझे अंधेरे से बड़ा डर लगता था।

एक दिन मुझे योगनिद्रा में अपने बचपन की एक घटना याद आयी। जब मैं छोटा-सा, लगभग चार-पाँच साल का रहा होऊँगा, तब हमारा परिवार एक नदी के किनारे पिकनिक के लिए गया था। मैं नदी में स्नान करने से डरता था। हमारे पिता जी हमको जबरदस्ती पकड़ कर नदी में ले गये और मेरे सिर को नदी में डुबो दिया। उस समय सिर को नदी में डुबाने से जो अंधकार सामने आया, उससे मैं डर गया। वह डर मेरे दिल में पच्चीस सालों तक रहा। जब तक संन्यास नहीं लिया, जब तक गुरु आश्रम नहीं गया, तब तक कुछ नहीं हुआ। शुरू हुआ उन्नीस साल के बाद। आश्रम में जैसे ही साधना करना शुरू की, वह डर बाहर आना आरंभ हो गया। जैसे ही वह घटना मेरे मानस पटल पर आई, मेरा डर समाप्त हो गया। अब रात-दिन एक जैसा है, कोई भय नहीं है।

ये दो घटनाएँ मैंने आपको इसलिए बतलायीं कि रोग के पीछे केवल एक विवेकपूर्ण परम्परा नहीं होती कि चावल खाया तो दमा हो गया या कोई प्याज बहुत खाता है तो यूरिक एसिड बढ़ गया या वह आदमी बहुत चिन्ता करता है, इसलिए इसका ब्लड प्रेशर बढ़ गया। ऐसा नहीं है। विवेक अपनी जगह पर ठीक है, वैज्ञानिक है, मगर इसके आगे आपको यह भी जानना होगा कि मनुष्य के रोग और दुःख उसके कर्मों की वजह से हैं। कर्म का मतलब कार्य ही नहीं, बल्कि अनुभूतिजन्य संस्कार है। हमें दैनिक जीवन में जो अनुभूतियाँ हो रही हैं, वे सुख या दुःख की अनुभूतियाँ हैं। योगनिद्रा के साथ इनका गहन सम्बन्ध है।

– 25 फरवरी 1978, बम्बई योग सम्मेलन

योग का इतिहास

योग की संस्कृति मोहनजोदड़ो से भी पुरानी है और इसके विषय में मेरे पास लिखित प्रमाण हैं। मैं दक्षिण अमेरिका और स्पेन भी गया हूँ, स्पेनिश भाषा मैं अच्छी तरह जानता हूँ। मैंने सभी ग्रंथों को पढ़ा है और विश्व में फैले हुए बड़े-बड़े ओपन कास्ट म्यूजियम के हजारों फोटो खींचे हैं। कोलोम्बिया में सेंट ऑगस्टीन का म्यूजियम पचासों मील के जंगलों में फैला हुआ है। मैंने हेलीकॉप्टर से फोटो खिंचवाई है। मैं वहाँ घोड़े पर गया हूँ, पैदल और जीप से गया हूँ। वहाँ मैंने अनेकों मूर्तियों के फोटो लिये हैं। आप मेरी योगविद्या पत्रिका में सबसे पहले उनको पायेंगे। दक्षिण अमेरिका में हिन्दू रहा करते थे, भारत के लोग थे। मैं हिन्दू शब्द का इस्तेमाल कर रहा हूँ, क्योंकि मुझको वहाँ तांबे की मूर्तियाँ देखने को मिली हैं। मुझे वहाँ योग की सभी क्रियाओं जैसे नेति, उड्डियान बंध, वज्रासन, सिंहासन आदि से सम्बन्धित साक्ष्य मिले हैं। वहाँ जंगलों में यत्र-तत्र-सर्वत्र मूर्तियाँ दिखती हैं। मेक्सिको में भी बहुत-से साक्ष्य मिलते हैं।

योग सभ्यता ऋग्वैदिक सभ्यता है। ऋग्वैदिक सभ्यता और योग का सम्बन्ध तन्त्र-शास्त्र से है। तंत्र योग का जनक है, किन्तु एक अपवाद काल में तंत्र-शास्त्र के महान् मनीषियों ने किन्हीं कारणों से कुछ भागों को, कुछ शाखाओं को अलग निकाल दिया, जैसे, हठयोग, मंत्रयोग वगैरह। जिस तरह विभिन्न कारणों से एक राजनैतिक दल अलग-अलग गुटों में बँट जाता है, उसी तरह तंत्रशास्त्र को विदेशी संस्कृतियों ने उसके व्यवहार शास्त्र के कारण मलिन कहा और उसको ब्लैकमेल करना शुरू किया। उसकी वजह से हम लोगों को बुरा कहना शुरू किया। तब महामुनियों ने सोचा कि इन लोगों को कितना समझाओगे, ये जान-बूझकर ऐसा कर रहे हैं, इसमें से सात्त्विक चीजों को निकाल लेते हैं। तब सब योग उसमें से निकाल लिये गये। मैंने इसके विषय में एक पुस्तक लिखी है जिसका नाम है 'तपोवन तंत्र'। उसमें मैंने यह भी स्पष्ट लिखा है कि एसेनी सभ्यता, जहाँ क्राइस्ट को प्रशिक्षण मिला, वह एसेनी संन्यासियों की सभ्यता थी। इसकी बहुत-सी पाण्डुलिपियाँ भी मिली हैं। पश्चिम जर्मनी में इन पाण्डुलिपियों को पढ़ा जा रहा है और उनमें से अनेक मेरे पास उपलब्ध हैं। उनमें एसेनी सभ्यता के बारे में यह बतलाया गया है कि येरुशलम, पैलेस्टाइन, बेथ्लेहम और बाइजैन्टीन आदि स्थानों में हिन्दू आश्रमों की तरह,

गुरुकुल और ब्रह्मचर्य आश्रम की तरह एसेनी लोगों के आश्रम थे, जहाँ क्राइस्ट को रहना पड़ा था।

योग की सभ्यता अत्यन्त प्राचीन है। अन्य धर्मों में भी योग की सभ्यता विद्यमान थी। जब तक उन धर्मों में साधनाएँ होती रहीं, तब तक यह सभ्यता जीवित रही। जब उन धर्मों में साधनाएँ बंद हो गयीं, तब वे केवल नाम के धर्म रह गये और राजनैतिक प्रभाव में आ गये। ऐसे में संन्यासियों की नहीं, बल्कि नेताओं की आवश्यकता होती है। इसलिए वहाँ साधक, साधनाएँ एवं आश्रम, सब खत्म हो गये। आँखें बंद करके आत्मा को, चेतना को जगाने वाले खत्म हो गये। वहाँ पर राजनीति को जानने वाले आ गये। अन्य धर्मों में साधनाएँ हैं, मगर वे सब भूल गये हैं। मैंने क्रिश्चियन रहस्यवाद को देखा है, इस्लाम को और सूफियों को भी देखा है।

इस प्रकार योग की सभ्यता प्राग्वैदिक है। यह समय के साथ अंधकार के गर्त में चली गई थी, लेकिन अब यह पुनरुज्जीवित हो रही है। यह इसका अभ्युदय-काल है। इसमें आप लोगों को इसके विषय में ठीक-ठीक एवं व्यवस्थित ढंग से बोलना पड़ेगा। कोई हठयोग को गाली देता है, तो कोई राजयोग को, कोई भावातीत ध्यान को तो कोई भस्त्रिका प्राणायाम को। यह सब छोड़ो, गाली देना बन्द करो। जितनी भी अच्छी क्रियाएँ हैं, उनको उसी प्रकार लो जैसे –

उत्तम विद्या लीजिए, जदपि नीच पाई होय।
परयो अपावन ठौर में, कंचन तजय न कोय॥

जिस प्रकार स्वर्ण अपवित्र स्थान पर पड़ा हो, तो भी उसे कोई त्यागना नहीं चाहता है, उसी प्रकार उत्तम विद्या कहीं या किसी से भी मिले, उसको ग्रहण कर लेना चाहिए, चाहे वह अधम व्यक्ति के पास ही क्यों न हो। अगर आपके हाथ से अँगूठी कमोड में गिर जाये तो उसे निकालकर फिर से पहन लोगे न। उसी प्रकार अगर हम खराब व्यक्ति हैं, व्यभिचारी हैं, लम्पट हैं, उससे आपको मतलब नहीं होना चाहिए, आपको केवल विद्या से मतलब होना चाहिए।

– 25 फरवरी 1978, बम्बई योग सम्मेलन

कुण्डलिनी शक्ति का जागरण

भारत और भारत के बाहर हमारी संस्कृति को वैज्ञानिक अर्थ देने का काम जिन-जिन लोगों ने इस शताब्दी में किया है, उनमें इस संस्था के संस्थापक स्वामी कुवल्यानंद जी का नाम उल्लेखनीय है। केवल उल्लेखनीय नहीं, बल्कि शीर्ष स्थान पर है। यह सभा प्रशंसा का पर्व नहीं है, आज के युग में प्रतिभा का मूल्य घटता जा रहा है और कलरव का मूल्य बढ़ता जा रहा है, भूसा बिक जाता है, चावल रह जाता है। मिट्टी सोने के मोल बिकती है और सोना कौड़ी के मोल बिकता है।

इस युग में केवल भारत की नहीं, बल्कि विश्व की एक अमर संस्कृति को ऊँचा उठाने और उसको वैज्ञानिक विचार वाली संस्कृति के हृदय-मंच पर स्थापित करने का काम जिन-जिन प्रतिभाओं ने किया है, उनका स्मरण करना बहुत आवश्यक है। समाज की गाड़ी और राष्ट्र का पहिया प्रतिभाओं की धुरी पर चलता है। उसे चलाने वाले मनीषी और प्रतिभावान् महापुरुष इस देश में थे, हैं और होंगे। किन्तु उनमें हजारों-हजार को लोगों ने न देखा, न सुना। वे आये और बिजली की चमक की तरह आँखों से ओझल हो गये, और उनमें से एक नाम स्वामी कुवल्यानन्द जी का है। हो सकता है मेरा भी नाम वहाँ पर हो, जो लहरों की तरह आये और चला जाये।

योग का सूक्ष्म स्वरूप

मैं हमेशा एक बात लोगों के दिमाग में भरने का प्रयास करता हूँ, वह है – जीवन का योग। इसी आधार पर हमें अपनी संस्कृति और अपने जीवन को प्रतिष्ठित करना है। लोग समझते हैं कि थोड़ा-सा योग कर लिया, स्वस्थ जीवन बिता लिया तो पूरा हो गया। लेकिन इससे योग के प्रति हमारा अनुग्रह पूरा नहीं होता है, हम उसके ऊपर कोई बहुत बड़ी कृपा नहीं कर रहे हैं। यदि विचार करके देखो और अच्छी तरह सोचो, तो यह शरीर न मन का आधार है, न आत्मा का। हम कभी-कभी पूछते हैं कि पदार्थ ऊर्जा का आधार है कि ऊर्जा पदार्थ का? मन और सत्य एक शरीर में रहते हैं या शरीर सत्य के अन्दर रहता है। जिन्होंने स्थूल दृष्टि से देखा, वे कहते हैं कि शरीर में सत्य है, आत्मा है, मन है। परन्तु मैं कहता हूँ, नहीं, इतनी बड़ी व्यापक मन की शक्ति, इतनी

बड़ी आत्मा की महान् शक्ति ही शरीर का आधार है, न कि शरीर इस महान् शक्ति का। यहीं पर सारी संस्कृतियों ने गलती की है। यहीं पर संस्कृतियों के दृष्टिकोण में विभाजन हुआ है।

भौतिकवाद और अध्यात्मवाद में कितना अन्तर है, हम इस बात को सोचने के लिए तैयार नहीं हैं। हमको समझ में भी नहीं आता है कि इस शरीर के अलावा, इस मन के अलावा हम एक विचित्र चीज के प्रहरी हैं। उसे जाग्रत करने की कोशिश दुनिया ने नहीं की। जीवन में अपनी असमर्थ बाँहों के सहारे हम तैर रहे हैं। हाथ थक जाते हैं और जीवन में तकलीफ आने लगती है, मन परेशान हो उठता है और शरीर में रोग घर कर लेते हैं। कोई माई का लाल यह बतलाने वाला नहीं है कि एक ऐसी शक्ति का खजाना हर इन्सान के अन्दर छुपा है, जिसको पाकर वह अपने पुरुषार्थ को सिद्ध कर सकता है। यही हठयोग का पहला आदेश है।

मैंने योग को आज तक कभी स्थूल रूप में नहीं माना है। मैं योग को सिर्फ भौतिक नहीं मानता हूँ। मैं आसनों एवं यौगिक क्रियाओं को भी शारीरिक नहीं मानता हूँ। मुझे मालूम है कि क्यों नहीं मानता, क्योंकि मैंने इसे जाना है। योग आदि, मध्य और अंत में सूक्ष्म विद्या है और इसकी एक-एक क्रिया सूक्ष्म के लिए है, आत्मा के लिए है। हम समाज में रहने वाले अविद्याग्रस्त जीव केवल इसके भौतिक परिणामों को देख रहे हैं। इसके सूक्ष्म परिणामों को हम नहीं देख रहे हैं। आत्मा से जो शक्ति उत्पन्न हो रही है, उसको देखने के लिए हमारे पास आँखें नहीं हैं। यही हठयोग का आदेश है कि किस प्रकार हम

अपने शरीर की नसों और नाड़ियों को शुद्ध करें, तब उन नाड़ियों में जो छुपी हुई शक्ति है, उसको जाग्रत करें। आप जानते हैं कि यह शरीर दो शक्तियों के बल पर चलता है – एक है प्राणशक्ति और दूसरी है मनःशक्ति। प्राणशक्ति कर्मेन्द्रियों की वाहक है और मनःशक्ति ज्ञानेन्द्रियों की।

प्राणशक्ति और मनःशक्ति

यदि इन दोनों शक्तियों को संतुलित करते हैं तो जीवन रूपी व्यापार सही ढंग से चलता है। मैं बोल रहा हूँ, आप सुन रहे हैं। मैं सोच रहा हूँ, आप समझ रहे हैं। कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों को चलाने के लिए, शरीर के अन्दर अंग-प्रत्यंग को जीवन्त बनाये रखने के लिए ये दो शक्तियाँ उत्तरदायी हैं। ये शक्यिाँ बहुत सूक्ष्म हैं। प्राणशक्ति और मन:शक्ति को दूसरे नाम से पिंगला और इड़ा कहते हैं। इन्हीं को तीसरे नाम से शिव-शक्ति कहते हैं। इनके अन्य नाम गंगा-यमुना और सूरज-चाँद भी हैं। ये शक्तियाँ हमारे जीवन को चलाने वाले उत्तरदायी तत्त्व हैं। यदि इनमें से एक शक्ति का भी ह्रास होता है, विघटन होता है, वह असंतुलित हो जाती है, तो हमारी मोटर बिगड़ जाती है। हमारा शरीर बिगड़ जाता है। हमारी इन्द्रियाँ रोगग्रस्त हो जाती हैं, मन बीमार हो जाता है, हमारी भावना कुण्ठित और कलुषित हो जाती है। इसीलिए हठयोग में बार-बार कहा गया है कि शरीर के अंदर की दो महान् रचनात्मक और क्रियात्मक शक्तियों को तुम संतुलित करो।

योगी कहते हैं कि हमारे शरीर में बहत्तर हजार नाड़ियाँ हैं। ये नाड़ियाँ इन शक्तियों की वाहक होती हैं, जिनसे प्राणशक्ति और मनःशक्ति की धारायें प्रवाहित होकर अंग-प्रत्यंग को प्राप्त होती हैं। इन बहत्तर हजार नाड़ियों में दस प्रमुख मानी जाती हैं। ये दस नाड़ियाँ हमारी प्राण शक्ति की उच्च-स्तरीय तरंगों का, हाई वोल्टेज पावर का संरक्षण करती हैं। बहत्तर हजार नाड़ियाँ वे हैं, जो सामान्य स्तर की शक्ति का संरक्षण करती हैं और ये दस नाड़ियाँ हाई वोल्टेज पावर का संरक्षण करती हैं। योगी-महात्माओं ने इन दस नाड़ियों में से भी तीन विशेष नाड़ियों के नाम लिये हैं, ये हैं इड़ा, पिगंला और सुषुम्ना।

कुण्डलिनी शक्ति

ये तीन नाड़ियाँ कुण्डलिनी शक्ति के मूल प्रवाह को ले जाने के लिए उपयुक्त होती हैं। इसीलिए इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना, इन तीन नाड़ियों का योग में विशेष रूप से उल्लेख होता है। बहत्तर हजार नाड़ियाँ भी दोनों प्रकार की

शक्तियों का समन्वय करती हैं, किन्तु इन तीन नाड़ियों में एक विशेष शक्ति का संचरण हमें करना है और वह विशेष शक्ति है, कुण्डलिनी शक्ति। डरना मत, यह कुण्डलिनी शक्ति जब जग जाती है, तब अपने अन्दर अत्यधिक मात्रा में शक्ति पैदा करती है। कम शक्ति होने पर शरीर में कहीं पर उसका दबाव कम हो जाता और कहीं पर बढ़ जाता है, ऐसे में ही नर्वस ब्रेकडाउन होता है। मस्तिष्क में शक्ति जाती ही नहीं और मन दुर्बल हो जाता है।

यह नर्वस डिप्रेशन क्या है? वह शक्ति जो हमारे शरीर में नित्य निरंतर क्षीण होती जाती है, वह शक्ति जो नित्य प्रति हमारे अन्दर समाप्त होती जा रही है, जिसका विघटन होता जा रहा है, हम उस शक्ति की पूरी-पूरी आपूर्ति नहीं कर पा रहे हैं, क्योंकि हमारे जीवन में उस शक्ति का उपयोग और खिंचाव बहुत हो रहा है। कभी चिंता है, इच्छा है, वासना है, कभी भोग है, तो कभी कुछ और है। जब हमारी शक्ति की मांग बहुत ज्यादा हो जाती है, तब शक्ति का विघटन होने लगता है। किसी का फ्यूज उड़ जाता है। किसी को पागलखाने में जाना पड़ता है। इसके लिए महात्मा लोगों ने कहा कि तुम अब बड़ा पावर हाउस खोलो। इस बड़े पावर हाउस का नाम है, 'कुण्डलिनी एण्ड कंपनी अनलिमिटेड'! मैं मजाक के रूप में इसलिए बोल रहा हूँ कि कहीं यह विषय भारी नहीं पड़े!

वह कुण्डलिनी शक्ति, जिसमें से अजस्र शक्ति प्राप्त होती है, उसको इन बहत्तर हजार नाड़ियों में प्रवाहित करने के लिए बीच में एक विशेष लाईन की जरूरत पड़ती है, अन्यथा ये छोटी-छोटी नाड़ियाँ उस महान् शक्ति को ग्रहण नहीं कर सकतीं। इसलिए इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना बीच में आ गईं। समझो कि हाई टेन्शन तार दस-पन्द्रह हजार वोल्ट की बिजली को ट्रांसफॉर्मर केबिन में ले जाता है, फिर धीरे-धीरे अन्य तारों से वह घर में जाती है। घर पहुँचकर बाथरूम में जाती है, कमरे में जाती है, रसोई में जाती है। इसी प्रकार हमारे शरीर के अंदर शक्ति वितरण की व्यवस्था है।

यह हठयोग शास्त्र जिसके बारे में मैं बोल रहा था, आज के युग में हम लोग इसका प्रयोग उपचार प्रणाली के रूप में करते हैं। रोग के निवारण के लिए इसका प्रयोग होता है। क्या करें, आज हम लोगों को हाथी से हल चलवाना पड़ रहा है। आज हमको मशीनगन से मच्छर मारना पड़ रहा है। यह विद्या इतनी महान् है कि इसका प्रयोजन शक्ति का जागरण है, और इस शक्ति के जागरण से हम अपने जीवन को शक्तिमय कर सकते हैं। मेरे पास भी लोग आते हैं और योग से रोग निवारण के सम्बन्ध में पूछते हैं। उच्च रक्तचाप, दमा,

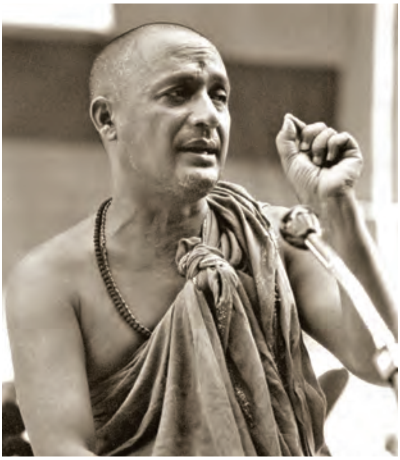

चिन्ता, साइनोसाइटिस, ब्रोंकाइटिस, आर्थ्राइटिस आदि जितनी टीस हैं, सब के बारे में सलाह देता हूँ। अब क्या करूँ, योग तो सिखलाना पड़ता है। मैं यह नहीं कहता कि योग से रोग दूर होते हैं, मैं कहता हूँ योग से निश्चित रूप से रोग दूर होते हैं, शत-प्रतिशत रोग दूर होते हैं। अगर दूर नहीं होते, तो लोग दुबारा वापस आने का नाम ही नहीं लेते। केवल यही नहीं, योग के द्वारा न केवल रोग दूर होता है, बल्कि मनुष्य को जीवन में एक आध्यात्मिक दिशा मिलती है।

दुनिया में यदि कोई ऐसा उपचार शास्त्र है, कोई विज्ञान और इलाज की तकनीक है, जो तुम्हारे रोग का उपचार कर सके और तुम्हारी आध्यात्मिक चेतना को भी जगा सके तो बतलाओ। इतना ही पर्याप्त नहीं कि कोई ओषधि शास्त्र या कोई चिकित्सा विज्ञान आपकी बीमारी को दूर करे, क्योंकि एक रोग जायेगा, दूसरा रोग आयेगा। दूसरा रोग जायेगा, तो तीसरा रोग आयेगा। इसलिए मनुष्य के लिये यह जरूरी है कि उपचार के साथ-साथ उसको आध्यात्मिक दिशा भी मिले। आध्यात्मिक दिशा देने वाला केवल एक उपचार विज्ञान है – योग विज्ञान। यह मैं स्वीकार करता हूँ और सिखाता भी हूँ। इस काम के लिए सब बड़े-बड़े योगविद् लगे हुए हैं, किन्तु मैं जो बात बतला रहा हूँ वह कुछ और ही है। योग मूलतः शक्ति का जागरण करके और उस शक्ति को इस भौतिक शरीर में वितरित करके उसके दोषों और रोगों को नष्ट करता है। इसीलिए जब स्वामी शिवानन्द जी से मेरा परिचय हुआ और मैं उनकी शरण में गया, तो वे बार-बार कहते थे कि आसन करने से भी कुण्डलिनी का जागरण होता है, जो उस समय मेरी समझ में नहीं आया। मैंने भी योग विज्ञान पढ़ा है। तुम लोगों के जितना तो नहीं, लेकिन इतना तो जरूर पढ़ा है।

हठयोग का सूक्ष्म प्रयोजन

स्वामी शिवानन्द जी कहते थे कि हठयोग के अभ्यास से, आसनों के अभ्यास से कुण्डलिनी जाग्रत होती है। यही नहीं, बल्कि आसनों और प्राणायामों के

अभ्यास से हम अपनी चेतना में ठोकर दे सकते हैं। अगर हम एक-एक आसन ठीक तरह से करते हैं और उसकी पूर्ण अवस्था को सिद्ध करते हैं, शास्त्र के अनुसार उसके नियमों का पालन करने का भरसक प्रयत्न करते हैं, तो ये आसन-प्राणायाम हमारे शरीर में नाड़ियों के अन्दर छुपी हुई ओज शक्ति, तेज और विद्युत तरंगों को जाग्रत कर सकते हैं, इसमें संदेह की कोई बात नहीं।

सामान्य रूप से लोग सोचते हैं कि आसन एक शारीरिक स्थिति है, अतः इसका प्रभाव केवल शरीर तक ही पड़ेगा। मैं दूसरी बात कहता हूँ। मैं कहता हूँ कि यौगिक स्थितियों के संपादन से प्रथम परिणाम शरीर पर और द्वितीय परिणाम सूक्ष्म शरीर पर जरूर पड़ता है और यही कहने के लिए आज मैं यहाँ बैठा हूँ। वह समय आ रहा है, जब सारे संसार के लोगों को एक मार्ग की जरूरत होगी। ज्ञान पर तो भाषण बहुत सुन लिया। आत्मा के बारे में भी बहुत सुन लिया, परन्तु जब क्रिया की बात आती है, तब हमारे सामने एक शून्य स्थिति रहती है। 'मैं आत्मा हूँ', यह कहने से आत्मा का ज्ञान नहीं होता। 'मैं रोग मुक्त हूँ' कहने से रोग मुक्ति नहीं होती। इसके लिए क्रियात्मक योग की साधना करनी पड़ती है। इन क्रियात्मक योग साधनाओं में हठयोग पहले आता है, और इस हठयोग के अभ्यास से ही हम वहाँ तक पहुँच सकते हैं, जहाँ पर ज्ञानी भी नहीं पहुँच सकता। तुम लोगों में कोई यदि ज्ञान मार्ग वाला है, तो मुझको क्षमा कर देना, क्योंकि मैं ज्ञान मार्ग छोड़कर योग मार्ग में आया हूँ। मैं अद्वैत वेदान्त को मानने वाला हूँ – *विश्वं दर्पणदृश्यमाननगरीतुल्यं निजान्तर्गतं पश्यन्नात्मनी मायया बहिरिवोद्भूतं यथा निद्रया।*

मैं इस विचार वाला आदमी हूँ। शृंगेरी का आचार्य पीठ मेरी गुरु परम्परा का मूल स्रोत है। संन्यास परम्परा अद्वैत मत का परिचय देती है। मेरे गेरू वस्त्र देखने से मालूम पड़ता है कि हाँ, मैं वेदान्त मत का अनुयायी हूँ, ज्ञान मत का अनुयायी हूँ। लेकिन बात सच्ची कहता हूँ – गाँठ-गिरह में कौड़ी नहीं, बाँकेपुर की सैर। शरीर बैठ नहीं पाता, श्वास समान हो नहीं पाती, आँखों की गति रुक नहीं पाती, मस्तिष्क के अन्दर उद्वेलन थम नहीं पाता, पेट में थोड़ी देर से भोजन मिलने पर या नहीं मिलने पर वायु आने लगती है, ऊपर से भी और नीचे से भी – ऐसी स्थिति में ज्ञान मार्ग वाला आदमी कैसे विचार करेगा? ऐसा जानकर मैंने सर्वप्रथम हठयोग का मार्ग अपनाया। मैं भी पहले सोचता था, क्या आसन-प्राणायाम करने से मुक्ति होती है? आसन तो शारीरिक है और मुक्ति आध्यात्मिक! एक शारीरिक क्रिया आध्यात्मिक परिणाम कैसे

ला सकती है? ऐसा सोचकर, मेरे गुरु ने जो कुछ मुझको सिखलाया था, उस पर चिन्तन करना प्रारंभ किया। जब हम जीवन की वास्तविक कठिनाइयों को देखते हैं, तब हमें ईमानदारी से सोचना पड़ता है।

एक साल बीत गया, मन रुका नहीं। दो साल बीत गये, मन रुका नहीं। बारह साल मन रुका नहीं। मैंने कहा तीरथ छोड़ो। वहाँ बैठकर मैंने जम कर हठयोग का अभ्यास किया। जितना मुझको गुरु-मुख से मिला था, शास्त्रों में पढ़ा था और जितना मेरे दिमाग में था, उन सबका अभ्यास किया। जब कभी बम्बई आया, कभी स्वामी कुवल्यानन्द जी की पुस्तकों से पढ़ा, कभी किसी अन्य की। गुरु तो मेरे थे ही, उनको सामने रख लेता। तब अभ्यास बढ़ता गया। जैसे-जैसे नाड़ीशोधन, भस्त्रिका और उज्जायी प्राणायाम का अभ्यास बढ़ता गया, मूलबंध, वज्रोली लगती गई। इन सब अभ्यासों के दौरान एक दिन मन को खोजा, तो वह लापता हो गया। मुझे बहुत खोजना पड़ा इसको और एक दिन तो बड़ी मुश्किल हो गई। मैंने सोचा, अब यदि यह मन भागा तो इसे बाँध कर रखना पड़ेगा।

प्राणायाम का महत्त्व

कभी-कभी बड़ी विचित्र स्थिति हो जाती है। मेरे कई सत्संगी बैठे हैं, मैं प्राणायाम के बारे में बोलता हूँ तो वे सोचते हैं कि प्राणायाम बहिरंग होता है। मैं तो इसे बहिरंग साधन नहीं मानता। अपने ज्ञान से बोलता हूँ कि यह समाधि की स्थिति तक पहुँचाता है। प्राणायाम स्वयं में ही समाधि है। नाड़ीशोधन के लिए बैठो और नियम से चलो, धीरे-धीरे इसका अभ्यास बढ़ाते जाओ। देखो, छः महीने में क्या परिवर्तन होता है, एक वर्ष में क्या परिणाम मिलते हैं। लगता है जैसे धीरे-धीरे हर कदम पर दुश्मन का सिपाही गिरता जाता है। एक-एक कर संस्कार नष्ट होते जाते हैं, एक के बाद एक विक्षेप नष्ट होते जाते हैं। चंचलता नष्ट होने लगती है। ध्यान की कोई भी साधना करो, विक्षेपों से तो मुक्त हो सकते हो, विचारों से मुक्त हो सकते हो, लेकिन विकल्पों से मुक्त नहीं हो सकते। विकल्पों से मुक्त होना साधु के लिए, समर्थ योगी के लिए और बड़े-बड़े प्रकांड महात्माओं के लिए भी संभव नहीं है।

जब चेतना स्थूल के धरातल को छोड़ती है और सूक्ष्म में प्रवेश करती है, उस समय चेतना पर किसी का नियंत्रण नहीं रहता। यह अनादि काल तक स्वप्न देखती रहती है, आध्यात्मिक अनुभव करती रहती है, दृश्य देखती रहती

है। किसी को प्रातःकाल का दृश्य दिखाई देता है तो किसी को संध्या का, किसी को सावित्री की तस्वीर दिखाई देती है तो किसी को कुछ और दिखलाई देता है। ध्यान में विकल्पों से मुक्ति बहुतों को नहीं होती। तब प्राणायाम के द्वारा विकल्पों को नष्ट किया जाता है। अनुभव से बोल रहा हूँ, पढ़कर नहीं।

अन्य साधनाओं से विक्षेप तो नष्ट हो जाते हैं, किन्तु जब बहिरंग कुम्भक लगता है, तब विकल्प भी नष्ट हो जाते हैं, दृश्य समाप्त हो जाते हैं। दृश्य माने बिजली, प्रकाश, फूल, सूरज, चाँद, तारे आदि का दिखाई देना। ये सभी विकल्प हैं, आगे जाने के लिए इनको समाप्त करना पड़ेगा। प्राणायाम के बिना इनको समाप्त करना संभव नहीं है। प्राणायाम के द्वारा भी इनको समाप्त करना केवल तब संभव होता है, जब बहिरंग कुम्भक और मूल बंध लग जाता है। भौतिक, सूक्ष्म और वैकल्पिक विचारों में भी जो सूक्ष्म विचार हैं, वे इस अभ्यास से एकदम थम जाते हैं। दिनों-दिन शांति का अनुभव होने लगता है। मैं यह इसलिए बतला रहा हूँ कि लोग प्राणायाम को श्वसन अभ्यास कहते हैं, लेकिन मैं इसे केवल श्वसन अभ्यास कहने के लिए तैयार नहीं हूँ।

एक बार मेरे आश्रम में एक पुस्तक छपी। उसमें संपादक की गलती से 'श्वसन अभ्यास' लिख दिया गया था। मैंने 9000 किताबें जला दी थीं, जो आश्रम में सभी को मालूम है। मैंने कहा, 'तुम जानते हो कि प्राणायाम हमारे ऋषि-मुनियों के द्वारा किये गये शोध से प्राप्त हुआ है। यह महान् शक्ति का खजाना है।' महात्मा, ऋषि-मुनि इतने प्रकांड विद्वान् थे कि उन्होंने उस प्राण को देखा था, जो चेतना का स्रष्टा है, जो सुषुप्तावस्था में कुण्डलिनी के रूप में विद्यमान रहता है और जो जाग्रत होकर कुण्डलिनी को एक ठोकर मारकर बोलता है, उठो जल्दी। उन्होंने उस प्राण को देखा, जिसके बारे में गीता में कहा गया है – *प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्।*

ऋषि-मुनियों ने प्राणों के आयामों को देखा है। उन्होंने प्राण की विभिन्न अवस्थाओं को क्रियाशील होते देखा, नहीं तो इसे प्राणायाम न बोलकर श्वासायाम बोलते। प्राणायाम को दो तरह से समझ सकते हैं – प्राणों पर यम या प्राणों का आयाम। प्राण एक सर्वव्यापी शक्ति है। ब्रह्माण्ड का कोई भी स्थान, सृष्टि का कोई भी कण शक्तिरहित नहीं है। वह प्राणशक्ति अनेक आयामों में अवतरित होकर जीवमात्र को जीवनदान देती है। निम्न स्तर पर यह प्राणशक्ति जीवन है, जिसके कारण हम जीते हैं, तुम जीते हो, वनस्पतियाँ और जीव-जन्तु जीते हैं। वह प्राण का एक आयाम है, किन्तु इस प्राण को

सूक्ष्म कर सकते हैं और इस प्राण की सूक्ष्मता मन है। जैसे-जैसे प्राण सूक्ष्म होते जाते हैं, वैसे-वैसे मन सामने आने लगता है। जैसे-जैसे मन सूक्ष्म होता जाता है, चैतन्य आत्मा सामने आने लगती है। इसकी क्रियात्मक अवस्थाएँ हैं। इसलिए हठयोग विद्या को केवल शरीर विद्या समझ कर रहने से काम नहीं चलेगा। अब हम चाहते हैं कि अपने ऋषि-मुनियों की महत् विद्या को दुनिया के लोगों को अच्छी तरह से समझावें।

शक्ति का उपार्जन

एक और बात मैं आपको बोलता हूँ। आप अच्छी तरह सोचने-समझने की कोशिश करेंगे, क्योंकि यही मेरा मुख्य विषय है। आपने कभी सोचा कि मेरे पास जो सम्पत्ति है, वह काफी नहीं है, इसलिए मैं चिंतित हूँ। मेरे पास जो बुद्धि है, वह काफी नहीं है, इसीलिए मैं जीवन में हार रहा हूँ। मेरे पास जो मनःशक्ति है, वह काफी नहीं है, इसीलिए मैं ठीक से सोच नहीं पा रहा हूँ। मेरे पास जो भावनाशक्ति है, वह शुद्ध नहीं है, इसीलिए उसमें से दुर्गंध आती है। जब आप जान गये कि आप के अन्दर शक्ति की कमी है, आप शक्ति की अपरिपक्वता से पीड़ित हैं, तब जबरदस्ती उस बेचारे मन को, बेचारी बुद्धि को, बेचारी भावना को बूढ़े बैल की तरह उसकी पूँछ मरोड़ कर चलाने का प्रयास क्यों कर रहे हैं? इससे कोई फायदा नहीं है। मन की असफलता शक्ति की कमी के कारण हुई। सोचने की अपरिपक्व शक्ति आपको किसी तरह मदद नहीं कर सकती और न ही आपका कार्य करने में सक्षम होती है।

जब सम्पत्ति की कमी हो जाए, तब हमारे सामने एक नया दृष्किोण आता है कि इतने से तो काम चलने वाला नहीं। अब चलो बम्बई, थोड़े और पैसे कमाकर आयेंगे। इसी प्रकार जब अपने अन्दर शक्ति न्यून हो जाए, जब अपने अंदर शक्ति की अपर्याप्तता का अनुभव होने लगे, तब एक बात हमारे ध्यान में आनी चाहिए कि अब हमें शक्ति का उपार्जन करना है। यह शक्ति आयेगी कहाँ से? क्या यह अतिरिक्त शक्ति बाहर से आयेगी? क्या विटामिन ए, बी, सी, डी, ई, एफ, जी, से आयेगी? नहीं, यह शक्ति बाहर से नहीं, बल्कि अंदर से आयेगी।

शक्ति के केन्द्र ग्रन्थियों के रूप में हमारे भीतर हैं, जैसे ब्रह्म ग्रंथि, विष्णु ग्रंथि, रुद्र ग्रंथि। इनका नाम आपने सुना होगा। इनके अन्दर जो महान् तत्त्व छुपा हुआ है, उसे जाग्रत करते हैं और वह है कुण्डलिनी। लोग कुण्डलिनी जागरण के नाम से डरते हैं। इस पर कहीं किताब छपती है तो लोग समझते हैं कि

कुण्डलिनी को जाग्रत करके उनका दिमाग घूम जायेगा। लोग समझते हैं कि कुण्डलिनी को जाग्रत करना गृहस्थों के लिए नहीं, संन्यासियों के लिए है। यह उल्टी बात है। संन्यासियों के लिए कुण्डलिनी? हम लोगों को शक्ति की क्या जरूरत है? हमें तो दो रोटी और दो धोती चाहिए, इससे ज्यादा तो कुछ जरूरत नहीं है।

व्यक्ति को शक्ति का अर्जन करने के लिए कुण्डलिनी योग की जरूरत है। लोग कहते हैं कि यह गृहस्थों के लिए नहीं है। इसके लिए ब्रह्मचर्य पालन करना पड़ेगा। कौन-से तंत्र शास्त्र में ब्रह्मचर्य की बात लिखी हुई है? मैं ब्रह्मचर्य विरोधी नहीं हूँ, मैं पक्की बात बोलता हूँ। मैं तो शुद्ध वैदिक धर्म को मानने वाला हूँ। हर चीज की सीमाएँ, मर्यादाएँ पुरुषों ने निश्चित की हैं। कौन-से तंत्र शास्त्र में ब्रह्मचर्य का विधान है? विवाहित जीवन का विधान है, वज्रोली मुद्रा का विधान है, खेचरी मुद्रा का विधान है, मूलबंध का विधान है। है कि नहीं? यह कुण्डलिनी शक्ति जीवमात्र के लिए है, जो जागती है, जाग रही है, किन्तु स्वाभाविक रूप से, प्राकृतिक रूप से जागने लगे, तो लाखों साल लग जायेंगे।

जितने जीवधारी हैं, उनमें धीरे-धीरे यह कुण्डलिनी चेतना के स्तर पर प्रगति और विकास कर रही है। यह शक्ति हम लोगों में भी आने वाले लाखों वर्षों में जाग्रत होगी, किन्तु महात्मा लोग इस कुण्डलिनी शक्ति के जागरण को तीव्र करने के लिए हठयोग का विधान बतलाते हैं, योग का विधान बतलाते हैं। कहते हैं कि शरीर के निम्नतम भाग में शुक्र नाड़ी के स्थान पर शरीर के एक छोटे-से भाग में स्थूल शरीर के आवरण में लिपटी हुई, सुषुप्त अवस्था में एक शक्ति छुपी हुई है। वह सोई हुई शक्ति का भण्डार है। जैसे कि स्थूल तिल में तेल रहता है, दूध-दही में मक्खन रहता है, काष्ठ में अग्नि रहती है, युरेनियम में परमाणु ऊर्जा शक्ति रहती है, मस्तिष्क में सूक्ष्म विचार रहता है, शरीर में सूक्ष्म भावना रहती है, उसी प्रकार स्थूल शरीर के इस भाग में सूक्ष्म रूप से कुण्डलिनी शक्ति का निवास है। हठयोग की क्रियाओं के द्वारा, आसन-प्राणायाम के द्वारा समुचित रूप से नियमों का पालन करते हुए हर व्यक्ति इसे जाग्रत कर सकता है। इसे जाग्रत करने के लिए प्राणायाम किया

जाता है और प्राणायाम के द्वारा शरीर के अन्दर योग की अग्नि पैदा की जाती है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा गया है – *न तस्य रोगो न जरा मृत्युः प्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम्।*

योगाग्निमय शरीर में न रोग होता है, न वृद्धावस्था, और न उसकी असामयिक मृत्यु होती है। प्राणायाम द्वारा वह योगाग्नि पैदा की जाती है, उसी योगाग्नि के द्वारा धीरे-धीरे उस कुण्डलिनी को उत्प्रेरित किया जाता है, जाग्रत किया जाता है। यह कुण्डलिनी शक्ति जाग्रत होकर सुषुम्ना नाड़ी से निकलती हुई आज्ञा चक्र तक जाकर स्थापित होती है। इसमें संदेह करने की कोई गुंजाइश नहीं है। जैसे-जैसे यह शक्ति जाग्रत होती है, वैसे-वैसे मस्तिष्क के सुषुप्त केन्द्र गुलाब, चमेली, मदन मालती या सूरजमुखी के पुष्प की तरह खिलते जाते हैं। इस प्रक्रिया के सम्बन्ध में पांतजल योग सूत्रों में कहा गया है – *ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा।* एक-एक विद्या जागती है, एकाएक आनन्द जागता है, केवल यही नहीं, यह तो बहुत ऊँची बात कह दी, शरीर के अन्दर जितनी ग्रंथियाँ है, शरीर के अंदर जितने रस-रसायन हैं, ये सब-के-सब इससे प्रभावित हो जाते हैं।

यह कितनी महान् कल्पना है, कितना महान् विचार है कि मनुष्य हठयोग की क्रियाओं के द्वारा अपने को चिन्मय स्वरूप की ओर ले जा सकता है। केवल यही नहीं, वह चाहे तो ज्ञान का अधिकारी बन सकता है, वेदान्त का अधिकारी हो सकता है, गीता के ज्ञान का अधिकारी हो सकता है, सांख्य का अधिकारी हो सकता है, क्योंकि जब तक चित्त शुद्ध नहीं होगा, शरीर शुद्ध नहीं होगा, प्राण शुद्ध नहीं होगा, तब तक ज्ञान के जितने स्रोत हैं, सब अशुद्ध रहेंगे, अपूर्ण रहेंगे।

मैंने एक आश्वासन के रूप में नहीं, बल्कि एक विचार के रूप में यह बात आपके सामने रखी है। मैं यह चाहता हूँ कि आप रोज सबेरे बैठकर आसन-प्राणायाम करो। अच्छी तरह सिद्धासन लगाओ, शरीर हिलना नहीं चाहिए, आँखें भी हिलनी नहीं चाहिए। फिर प्राणायाम करो। मन रुक जायेगा। मूलबंध लगाओ, उड्डियान बंध सीखो, जालंधर बंध लगाओ। प्राणों को नापते जाओ। प्राणों को गिनते जाओ। जैसे-जैसे अभ्यास बढ़ता है, वैसे-वैसे जो-जो नियम बतलाये गये हैं, गुरुजनों से नियमों को सीख कर उन्हें करते जाओ। ज्यादा नहीं तो थोड़ी शक्ति जरूर लगाओ। इससे जो शक्ति जागेगी, उसके द्वारा हमारे जीवन में आज जो कमियाँ हैं, उन्हें हम दूर कर सकेंगे।

– 13 मार्च 1978, कैवल्यधाम, लोनावला

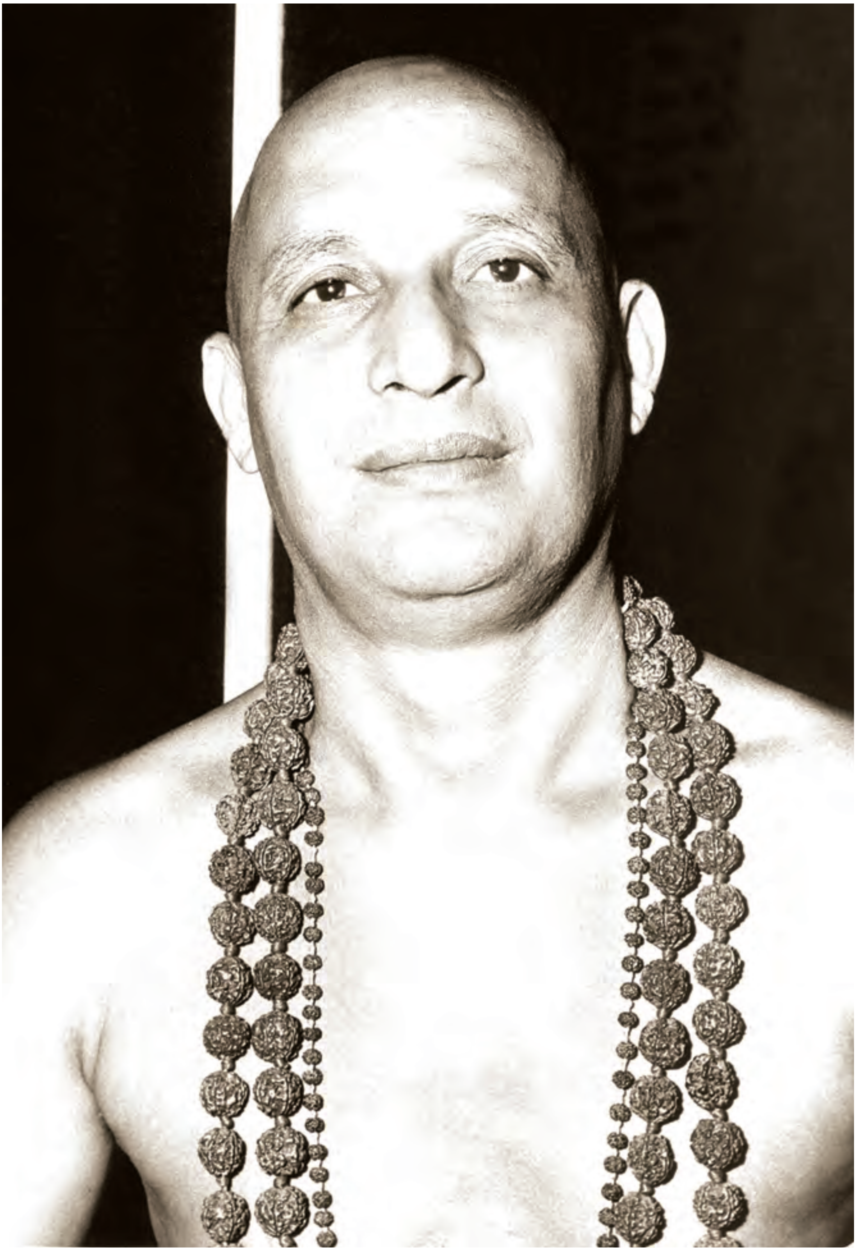

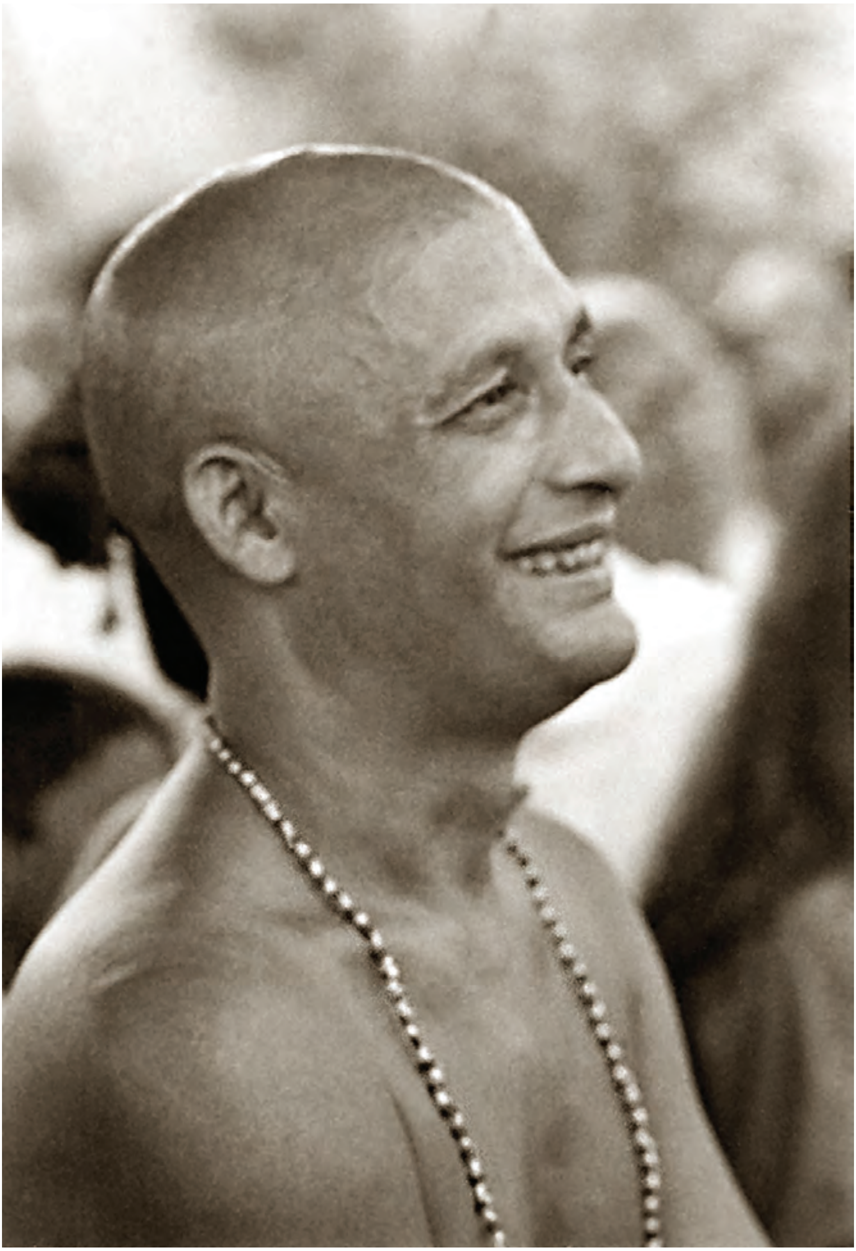

कल्पतरु की छाँव में

क्या योग के अभ्यास से बीमारियों को दूर किया जा सकता है?

डॉक्टर शरीर शास्त्र और उसकी क्रियाओं को जानते हैं। वे हमको समझायेंगे कि योग के भिन्न-भिन्न अभ्यासों को करते समय शरीर में क्या-क्या क्रियाएँ और प्रतिक्रियाएँ होती हैं ताकि उन्हें हम समझ सकें, किन्तु मैंने आपको पहले बता दिया है कि हम लोग केवल समझना चाहते हैं, सिद्ध करने की कोई जरूरत नहीं है। बहुत-से लोग योग के बारे में लंबी-चौड़ी बातें करते हैं और हम भी इन्हीं लोगों में से हैं। लंबी-चौड़ी बात इसलिए की जाती है कि इसके बहुत-से अच्छे परिणाम हमको अपनी आँखों के सामने देखने को मिले हैं।

एक उदाहरण आपको बतलाता हूँ, फ्राँस की एक महिला थी। उसको पैंतीस-चालीस साल की अवस्था में कैंसर हो गया। उसके तीस साल बाद वह मुझसे मिली। जब उससे बात हुई तो उसने अपना पूरा प्रकरण बतलाया और सारे कागजात वगैरह दिखलाये। उसने पूरी किताब भी दिखाई, जिसमें यह उल्लेख था कि उसको क्या था, कैसा था, उसने क्या किया, कहाँ से सीखा, किस प्रकार वह प्राणायाम, नेति, धौति करती थी। हमने कहा, यह तो मानने वाली बात है। अनुसंधान का तो मेरे पास कोई जरिया नहीं है, मगर वह स्त्री मेरे सामने खड़ी है, इसलिए हम किसी को कह सकते हैं कि तुम योग का अभ्यास करो, जरूर फर्क पड़ेगा।

एक साल पहले की एक विचित्र घटना है। यह घटना हुई हमारे परम मित्र के साथ। उसके घर में किसी को कैंसर हो गया। वह बहुत सम्पन्न है, उसको विदेश ले जाया गया। दो-तीन बार ले गए तो वह बेचारा रोगी विदेश ही चला गया, फिर वापस नहीं आया। उसके साथ एक और व्यक्ति थे। उनको भी वही बीमारी थी। वे बिहार के एक प्राकृतिक चिकित्सालय में चले गये। काफी समय बीत गया है, वे आदमी आज भी हैं। उसी रोग वाला एक अन्य व्यक्ति था। वह मेरे पास आया और उसने कहा, स्वामीजी, मैंने योग के ये अभ्यास किये और मैं ठीक हो गया। हम जब इन चीजों को अपने सामने देखते हैं, तो निश्चित रूप से कभी-कभी लंबी-चौड़ी बात करने को जी चाहता है।

दूसरी बात यह है कि शरीर का मालिक मन है। एक हद तक शरीर मन पर असर करता है, लेकिन अगर मन मजबूत हो जाये, बलवान् हो जाये, तो मन शरीर पर ज्यादा असर कर सकता है। मन शरीर पर इतना असर कर सकता है कि वह शरीर को नष्ट भी कर सकता है और शरीर का कायाकल्प भी कर सकता है।

हम मन को विचारों के रूप में देखते हैं, भावनाओं के रूप में देखते हैं, आंतरिक चेतना के रूप में देखते हैं; मन के बहुत आयाम हो सकते हैं। विचारों और भावनाओं के द्वारा शरीर पर असर डाला जा सकता है। हम मन की उस स्थिति में भी जा सकते हैं, जिसको अंतश्चेतना कहते हैं। जब हम अंतश्चेतना में जाते हैं, तब शरीर में किसी भी प्रकार का प्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं, क्योंकि शरीर तो पदार्थ है और इस पदार्थ में हम जो भी परिवर्तन करना चाहें कर सकते हैं। इसी कारण हम योग के बारे में या उस प्रसंग में लंबी-चौड़ी बातें करते हैं कि बहुत-से लोग अपनी अंतश्चेतना को विकसित कर अपने शरीर के अंदर के असाध्य रोगों को भी दूर कर सकेंगे।

हमारा एक परिचित आदमी था, फ्राँस का रहने वाला। उसको हाइड्रोसील की बीमारी थी। वह बेचारा घबराया, कैसे हो गई? उसके पेट में हर्निया की बीमारी भी थी, उससे भी वह घबराया हुआ था। उसने काम छोड़ दिया और अपने सब कागज-पत्र देने के लिए अपनी बहन के यहाँ गया। उसकी बहन यहाँ भारत में किसी महात्मा से आसन, प्राणायाम, धारणा आदि सीख रही थी। उसने कहा, 'मैं तो जीवन से थक चुका हूँ।' उसकी बहन ने कहा, 'हम तुमको एक बात बतलाते हैं', और उसने अपने भाई को कुछ बतला दिया। भाई ने करना शुरू कर दिया। पाँच या छः दिन के अंदर वह शांभवी मुद्रा में

एकाग्रता का अभ्यास करने लगा था। कुछ दिनों में उसको ऐसा लगा कि उसके शरीर के अंदर बड़े जोर का झटका लगा और कोई बम फूट गया। उसे मात्र आध्यात्मिक अनुभव हुआ था। उस दिन से आज तक उस व्यक्ति को जितनी बीमारियाँ हुयीं, वे सब पूरी तरह से ठीक हो गयीं।

योगनिद्रा शवासन में क्यों की जाती है? क्या इससे चिन्ता और तनाव को दूर किया जा सकता है?

शवासन शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है, शव और आसन। शव शब्द का सामान्य अर्थ लगाया जाता है मृत शरीर, मगर शव का शब्दार्थ होता है, सोया हुआ। चाहे मरा हुआ आदमी सोया हो या जिन्दा आदमी, बात एक ही है। इसलिए शवासन शब्द सही है। शवासन योगनिद्रा का एक अंग है। इसमें कई प्रकार से फायदा होता है। एक तो अविचलित आसन की वजह से फायदा होता है, क्योंकि उस समय हृदय को कुछ आराम मिलता है। दूसरा, श्वास की वजह से भी फर्क पड़ता है, क्योंकि श्वास नियमित तौर पर अन्दर-बाहर आती-जाती है। तीसरा, चूँकि आप श्वास को देख रहे हैं और गिन रहे हैं, तो एकाग्रता का बिन्दु बना हुआ है, इसकी वजह से भी फर्क पड़ता है। चौथी चीज यह है कि आप कभी-कभी शवासन में चिन्ता को भी दूर करते हैं, जैसे कि हम लोग श्वास की गिनती द्वारा कराते हैं। हम कहते हैं पूरक और रेचक 5:5 के अनुपात में होना चाहिए। इससे चिन्ता में बदलाव आ जाता है, उसकी सजगता का केन्द्र बदल जाता है। उदर श्वसन में उल्टा गिनते हैं, जैसे 100, 99, 98, 97, 96, 95 और बोलते हैं कि जहाँ गड़बड़ाओगे, वहाँ फिर सौ से गिनना होगा। तो एक बार फिर चिन्ता कम हो गई। इन सब क्रियाओं को मिलाने से शवासन यानी योगनिद्रा में रक्तचाप कम होता है, यह इसका एक मुख्य तत्त्व है।

मनुष्य दुनिया में अपनी वासनाओं को लेकर आया है। हर व्यक्ति की अपनी-अपनी वासनाएँ होती हैं। कई लोग प्याज नहीं खाते, तो रसगुल्ला बहुत खाते हैं, कितने लोग जो मीठा नहीं खाते, मिर्ची बहुत खाते हैं। प्रायः जितने भी लोग दुनिया में हैं, उनमें कोई व्यक्ति नहीं छूटता है। मनुष्य तीन इच्छाओं को लेकर आया है – संतान की इच्छा, सम्पत्ति की इच्छा और स्त्री-पुरुष भोग की इच्छा। ये इच्छायें उत्तेजक का काम करती हैं। मनुष्य के भीतर जितनी भी इच्छायें हैं, इन तीन इच्छाओं के अन्दर ही आती हैं। इन

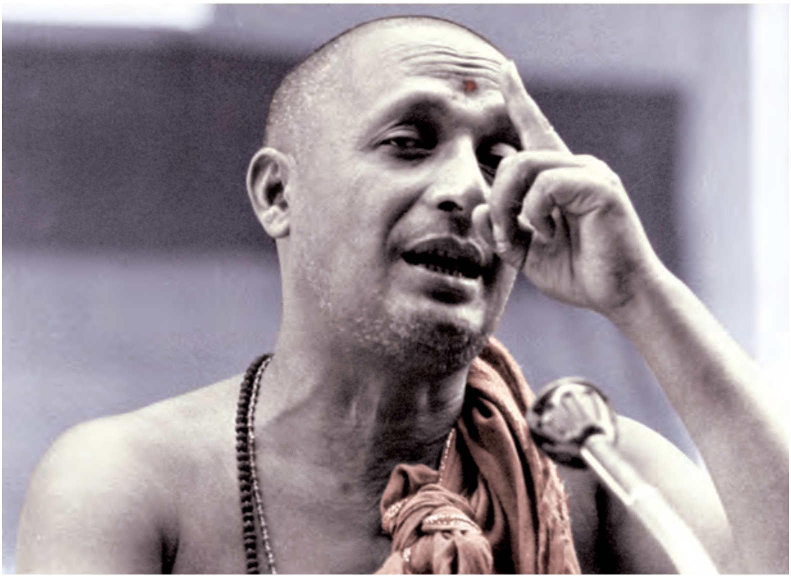

इच्छाओं का त्याग कोई नहीं कर सकता। जब ये तीन इच्छायें होती हैं, तब मनुष्य के अंदर निरंतर उनको पूरा करने की व्यग्रता होती है। जैसे, मुझको मकान बनाना है तो वह इच्छा विचारों को, भावनाओं को बेचैन करती रहती है। मुझको बी.ए. पढ़ना है, एम.ए. पढ़ना है, मुझको आई.ए.एस. बनना है, मुझको एम.बी.बी.एस. पढ़ना है, इस तरह की इच्छायें दिन-रात चेतन मन के स्तर पर, भावना के स्तर पर अजपाजप की तरह चलती रहती हैं। ये मनुष्य की प्रकृति पर प्रभाव डालती हैं।

धूम्रपान से थकावट होती है, मैं मानने के लिए तैयार नहीं हूँ। माँस-मदिरा से तनाव का जन्म होता है, यह भी मानने के लिए तैयार नहीं हूँ। मनुष्य के जीवन में काम-क्रोध के आवेग आते हैं, उससे भी तनाव होता है, यह भी मैं मानने के लिए तैयार नहीं हूँ। मैं धर्म की बात अभी नहीं बोलता हूँ, सिद्धान्त की बात भी नहीं बोलता हूँ, बल्कि मैं तो सच बोलता हूँ। आदर्शवाद सब बेकार है। मनुष्य जब अपने जीवन की घटनाओं से मन के स्तर पर प्रभावित होता है, तब तनाव शुरू होता है। तुम तनावग्रस्त हो, कोई बात नहीं, पर तुम जानते हो कि तुम तनावग्रस्त हो, यह बहुत मायने रखता है।

पश्चिमी देशों में रक्तचाप चिन्ता का कारण बन जाता है और वही चिन्ता तनाव का कारण बन जाती है। पश्चिम के देशों में जो परेशानी है, वह मन के

प्रभावित होने के कारण है। एक साधारण हिन्दुस्तानी है, उसको गुस्सा आ जाता है, आ जाता है, तो चला भी जाता है। लेकिन पश्चिमी देश के लोग गुस्सा करते हैं और गुस्सा करने के बाद घंटाभर सोचते हैं कि मुझको गुस्सा आया। फिर सोचते हैं कि गुस्सा क्यों आया, गुस्से का आयाम क्या था और उसकी गहराई कितनी थी। मुझको गुस्सा नहीं करना चाहिए था। उसकी पूरी ज्योमेट्री, एलजेबरा, सब लगाते हैं। रोज उसी बात पर विचार करते हैं, तो मनुष्य के मन पर इसका खराब असर पड़ता है।

तुम रोज यहाँ से चर्च गेट जाते हो, उससे कुछ नहीं होता है, तुम जा सकते हो, कुछ नहीं होगा। तुम हजार बरस तक जाओ, तुमको ब्लड प्रेशर नहीं होगा। लेकिन जब तुमको बोला जाता है कि जीवन बहुत तेजी से भाग रहा है, तब तुम कहते हो, 'हाँ, मैं प्रतिदिन चर्चगेट जाता हूँ और वापस आता हूँ, मुझे अवश्य कुछ होगा।' यही हिस्टीरिकल मन और हिस्टीरिकल चेतना है। अब कुत्ता दिनभर चर्चगेट जायेगा, उसको कुछ नहीं होगा। गधे को रोज यहाँ से लादकर ले जाओ, उतना चलने से उसको कुछ नहीं होगा, क्योंकि वह जानता ही नहीं कि वह क्या कर रहा है। कुत्ते में, जानवरों में ज्ञान की कमी है। आहार, निद्रा, भय, मैथुन समान है, मगर चेतना नहीं है। कुत्ते को भी किसी को देखकर गुस्सा आता है, मगर वह नहीं जानता कि वह भौंक रहा है। मनुष्य को गुस्सा आता है, तो वह जानता है कि उसको गुस्सा आता है और यह भी जानता है कि वह गुस्से की वजह से प्रभावित हो रहा है। वह यह भी जानता है कि उस पर पूरा प्रभाव पड़ रहा है।

मनुष्य की स्थिति उन्मादपूर्ण मन के कारण बड़ी उलझी हुई है। इस उन्माद को रोकने के लिए क्या करते हैं हम लोग? योग में मन की क्रियाओं की गति को धीमा करते हैं, प्रत्याहार के द्वारा इन्द्रियों को मन से अलग कर दिया जाता है। इन्द्रियों को कहीं पर थोड़ी देर के लिये, एक्यूपंक्चर की तरह अवरुद्ध कर देते हैं। एक घंटा मन सो जाता है। उससे बहुत फायदा होता है? बस, यही है और तो कुछ है नहीं।

योगनिद्रा में श्वास के प्रति सजगता से तनाव दूर होते हैं। श्वास की क्रिया के प्रति सजग बनने के लिए सरल स्थान है नासिका। इसको हम लोग बहुत सरलता से कर सकते हैं। यह केवल उदाहरण के लिए आपको बतला रहा हूँ कि श्वास के आधार पर भी योग निद्रा की क्रिया को ज्यादा विस्तार के साथ किया जा सकता है।

दूसरा है, अंगों पर सजगता को घुमाना। दाहिने भाग से शुरू करते हैं, दाहिने हाथ का अँगूठा, दूसरी ऊँगली, तीसरी ऊँगली, चौथी, पाँचवीं, हथेली, कलाई, कोहनी, कंधा, बगल, कमर, जाँघ, घुटना, पिंडली, टखना, एड़ी, तलुआ, पंजा; इसी प्रकार बाँयी तरफ। विभिन्न अंगों में धीरे-धीरे हम लोग मन का संपात करते हैं, और मन का संपात करके उसके भारीपन को निकालते हैं, यह मुख्य चीज है। शिक्षक के साथ-साथ विद्यार्थी को भी इन चीजों की थोड़ी-बहुत जानकारी रहनी चाहिए। इस विषय पर हमारे पास दो पुस्तकें हैं – एक है प्राण विद्या और दूसरी है योग निद्रा।

यदि समाधि जीवन का लक्ष्य है, फिर आप आसन-प्राणायाम क्यों सिखाते हैं, जबकि ये योग के अंग नहीं हैं?

समाधि को योगशास्त्र में दो रूपों में कहा गया है। एक होती है जड़ समाधि और दूसरी है चैतन्य समाधि। यह राजयोग में दो भागों में आती है – सबीज और निर्बीज, सविकल्प और निर्विकल्प।

इन दो समाधियों में कुछ अन्तर है। जड़ समाधि में शरीर के अन्दर प्राणों की क्रिया को हम लोग अन्तर्निष्ठ कर लेते हैं। चैतन्य समाधि में चित्त की वृत्तियों का निरोध करके तब आगे जाते हैं। जड़ समाधि के द्वारा हृदय की गति को भी बंद किया जाता है और भूमि के अंदर प्रविष्ट होकर पाँच से बीस दिन तक बैठा जा सकता है। एक समय नोट किया गया और उस समय पर व्यक्ति ने जड़ समाधि ग्रहण की। दस दिनों के बाद वह बाहर निकला और उसके शरीर के अन्दर चयापचय जैसी सभी प्रक्रियायों को देखा गया तो पता चला कि इन दस दिनों में क्या-क्या परिवर्तन हुआ। इस विषय पर बहुत काम हुए हैं।

दूसरी समाधि चित्त की वृत्तियों के निरोध, संस्कारों के क्षय और विवेक ख्याति को प्राप्त करने के बाद प्राप्त होने वाली समाधि है, जिसको प्राप्त करने के बाद मनुष्य को कैवल्य की अवस्था का अनुभव होता है। वह समाधि शरीर की स्थिति नहीं है, वह समाधि मन की स्थिति भी नहीं है और वह समाधि इन्द्रियों की स्थिति भी नहीं है। उस समाधि को प्राप्त करने के बाद मनुष्य के शरीर या मन पर जो असर पड़ता है, वह प्रत्यक्ष नहीं, बल्कि अप्रत्यक्ष होता है। इसे चैतन्य समाधि कहते हैं। इस पर अभी तक कोई विशेष कार्य नहीं हुए हैं।

मैं स्पष्ट रूप से आपको बतला देना चाहता हूँ कि मैं यह स्वीकार नहीं कर सकता कि आसन और प्राणायाम योग के अंग नहीं हैं। योग की पूरी

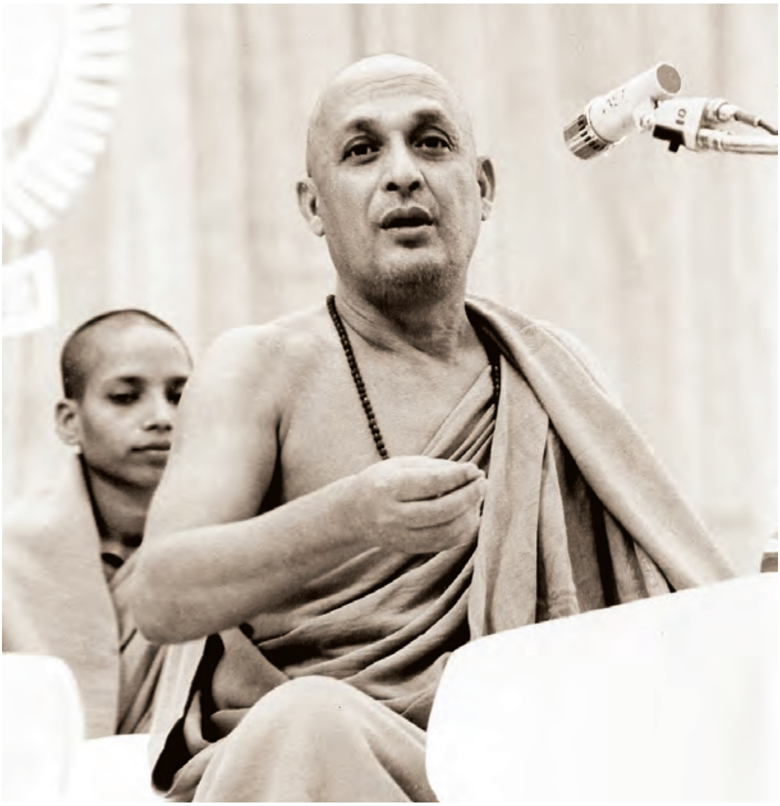

परम्परा के दो आधार हैं – एक प्राग्वैदिक आधार है तंत्र का और दूसरे हैं महर्षि पंतजलि। ठीक इसी से नाथ संप्रदाय के योगियों ने हठयोग की परंपरा निकाली है और तंत्र में आसनों का स्पष्ट रूप से वर्णन है। इसको न हमने जोड़ा, न स्वामी शिवानन्द जी ने जोड़ा। मैं आपसे सहमत हूँ कि आसन का लक्ष्य रोगों को दूर करना नहीं, बल्कि द्वन्द्व की अधिकता को सहन करना है – *ततो द्वन्द्वानभिघात:*। अंग्रेजी में द्वन्द्व का मतलब होता है टेंशन। इधर खींचो, उधर खींचो – इसको टेन्शन कहते हैं। दो आदमी अपने-आपको इधर-उधर खींचते हैं, इसी को तनाव कहते हैं। शरीर के अंदर जो तनाव की प्रवृत्ति है, द्वन्द्वों की प्रवृत्ति है, उसको नाश करने के लिए आसनों का उपाय था। महर्षि पतंजलि ने स्पष्टतः आसनों का नाम नहीं लिखा, क्योंकि वे तो सूत्र लिख रहे थे। *स्थिरसुखमासनम्* – इसमें यह बतलाया गया कि आसन को कैसे करना चाहिए। फिर बताया कि द्वन्द्वों को कैसे दूर किया जा सकता है, प्राणायामों

का संदर्भ दिया, इत्यादि। मगर उन्होंने नाम नहीं बतलाया। इसका मतलब यह नहीं कि वे आसनों के पक्ष में नहीं थे, वे केवल सूत्र लिख रहे थे।

पुनः योग, योग के लिए है कि योग मनुष्य के लिए है? प्राचीन काल में लोग योग करते थे और मन लगाकर बैठ जाते थे, ब्रह्माण्ड में घुस जाते थे, चेतना की ऊँचाइयों तक पहुँच जाते थे। आजकल आदमी बहुत बीमार है और उसको योग की जरूरत है। हम इस बात से सहमत हैं कि हम योग को चिकित्सा के रूप में ला रहे हैं या इस पर अनुसंधान कर रहे हैं या इसके बारे में बोल रहे हैं। हमारे पूर्वजों के दिमाग में यह बात नहीं थी, क्योंकि वे लोग दूसरी परम्परा में जीते थे, दूसरे वातावरण में रहते थे, दूसरे ढंग से सोचते थे और दूसरे ढंग का खाते थे।

योग के जितने भी अंग हैं, आज निश्चित रूप से उन अंगों पर अनुसंधान करने की आवश्यकता है। मगर क्यों? योग को सिद्ध करने के लिए नहीं, बल्कि उसको समझने के लिए। योग स्वयंसिद्ध सिद्धान्त है, पूर्ण सिद्धान्त है। न शीर्षासन को सिद्ध करना है, न प्राणायाम को, न मूलबंध को। किन्तु यहाँ लोगों को आधुनिक भाषा में समझाने के लिए हमको नई टेक्नोलॉजी का उपयोग करना पड़ता है। वे मणिपुर चक्र को सोलार प्लेक्सस कहेंगे। अनाहत चक्र किसी को समझ में ही नहीं आता, उसको कार्डियक प्लेक्सस बोलें तो सबकी समझ में आता है।

नम्रता के साथ हमारा यह कहना है कि मनुष्य पूर्ण भी है और अपूर्ण भी। क्या दोनों के लिए एक साधना हो सकती है? जो लोग मूल अवस्था में हैं और जो लोग समाधि की अवस्था में हैं, क्या उनके लिए एक ही साधना होगी? नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। इसलिये योगारूढ़ के लिए, योग-सिद्ध के लिए, योग-यति के लिए योग की अलग-अलग साधनाएँ हैं। आज साधारण व्यक्ति को हम क्या साधना बतायेंगे, जिस बेचारे को अपनी गृहस्थी के साथ समन्वय करने की ताकत नहीं है, मियाँ-बीबी में रोज झगड़ा चलता है, जानते हैं सब लोग, मगर उसके साथ भी समझौता नहीं कर सकता, तब ऐसे व्यक्ति को चित्त एकाग्र करने की साधना बतलानी पड़ेगी।

हम मानते हैं समाधि जीवन का लक्ष्य है, समाधि मनुष्य के जीवन का अंतिम उद्देश्य है। लेकिन महात्मा, गुणी, ज्ञानी, संत बतलाते आ रहे हैं कि आसन और प्राणायाम सीखना भी अत्यन्त आवश्यक है।

– 24 दिसम्बर 1978, डॉक्टरों के साथ वार्ता, बम्बई

हठयोग की आवश्यकता

हठयोग ऐसे व्यक्ति के लिए है जिसकी भावनाएँ कुंठित हैं, जो ठीक निर्णय नहीं ले सकता, जिसका भावनाओं पर नियंत्रण नहीं है और जो संतुलन के अभाव में कुछ-का-कुछ कर बैठता है। जिस प्रकार वैज्ञानिक पदार्थ को विभक्त करके उसमें से ऊर्जा शक्ति को अलग कर सकते हैं, उसी प्रकार हठयोग भी शरीर में ऊर्जा को मुक्त कर सकता है। हठयोग को केवल शारीरिक स्तर तक सीमित रखना हमारी समझ से ठीक नहीं है। मैं मानता हूँ कि संसार में बहुत-से लोग रोगी हैं और मेरे पास रोगी ही अधिक संख्या में आते हैं। योगियों की संख्या बहुत कम होती है। जो शरीर या मन के रोगी हैं या भोग के कारण रोगी हो गये हैं, उन्हें इन क्रियाओं को सिखलाना इसलिए आवश्यक हो गया है कि अब मनुष्य अपने संकल्प बल से यम-नियम का पालन नहीं कर पाता है।

जब हठ योग से शरीर और प्राण, रस और रसायन शुद्ध हो जाते हैं, तब हमारी वृत्ति अपने आप बदलने लगती है। अमृत और विष का भेद मालूम पड़ने लगता है। भोज्य और अभोज्य पदार्थों का ज्ञान बिना पुस्तकों के भी होने लगता है। इसलिए हठ योग को आप बिलकुल अच्छी तरह से समझिये और सही ढंग से इसका अभ्यास आरंभ कीजिए।

प्राण और चित्त शक्ति

हकारेणोच्यते सूर्यः ठकारश्चन्द्रसंज्ञकः – यह हठ योग की परिभाषा है। चन्द्रमा और सूर्य के बीच निरंतर जो असंतुलन बना रहता है, उस असंतुलन को दूर करना हठयोग का काम है। चन्द्रमा और सूर्य का प्रयोग शरीर के अंदर इड़ा और पिंगला नाड़ी के संदर्भ में किया जाता है। इड़ा नाड़ी मनोवाहिनी है और पिंगला नाड़ी प्राणवाहिनी। शरीर के अन्दर इन दो शक्तियों का आपस में निरंतर सम्पर्क होता रहता है। अगर मन और प्राणों के बीच सम्पर्क नहीं होगा, तो ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों का काम नहीं हो सकेगा। ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ दुर्बल हो जायेंगी। कभी परानुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र प्रबल रहता है और अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र को दबाकर रखता है, तो कभी अनुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र प्रबल रहता है और परानुकम्पी तन्त्रिका तन्त्र को दबाकर रखता है। ऐसी स्थिति में हमारे अंदर मानसिक शक्तियों और प्राण शक्तियों के बीच में संतुलन नहीं रह पाता।

जब प्राण शक्ति अधिक हो जाती है और मनःशक्ति उसको सन्तुलित नहीं कर पाती है, तब मनुष्य उस प्राण शक्ति का उपयोग ऊधम, क्रान्ति, हत्या, अपराध, मार-पीट आदि के रूप में करता है। जब मनुष्य की मानसिक शक्ति अधिक हो जाती है और प्राण शक्ति दुर्बल रहती है, तब मन में बहुत तरह के विचार आते हैं, वह सोचता है कि मैं संसार का राष्ट्रपति बन जाऊँ, हिन्दुस्तान का प्रधानमंत्री बन जाऊँ, काँटों की गद्दी पर भी वह बैठना चाहता है। वह शेक्सपीयर, मिल्टन और राज कपूर भी बनना चाहता है। वह सब कुछ बन जाना चाहता है। जीवन में एक समय ऐसा भी आता है जब मनुष्य को यह मालूम पड़ता है कि मैं जो बनना चाहता था वह नहीं बन सका। उस समय उसे निराशा होती है। निराशा का मुख्य कारण मनुष्य की मानसिक शक्ति और प्राणशक्ति के बीच संतुलन का पूर्ण अभाव होता है। इसलिए हठयोग में सबसे पहले यह ध्यान रखा जाता है कि इन दो नाड़ियों के बीच संतुलन हो।

शक्ति को व्यापक रूप में देखना होगा। वह शक्ति इस जीवन में, शरीर में तीन रूपों में रहती है – प्राणशक्ति, मनःशक्ति और आत्मशक्ति। आत्म-शक्ति की बात बाद में करेंगे। पहली दोनों शक्तियाँ नाड़ियों के रूप में जानी जाती हैं। शरीर में हजारों नाड़ियाँ हैं, शास्त्र कहते हैं बहत्तर हजार। मैं कहता हूँ कि ये बहत्तर हजार सर्किट हैं जिनके द्वारा चेतना हमारे शरीर के अंग-अंग में पहुँचती है। इनमें दस नाड़ियाँ प्रमुख हैं। उन दस नाड़ियों में से तीन को प्रमुख मानते

हैं, जिनका नाम योग शास्त्र में हमेशा आता है – *इड़ा पिंगला ताना भरनी, सुखमन तार से बीनी चदरिया*।

सारा हठयोग इड़ा-पिंगला पर आधारित है। इड़ा मनोवाहिनी है। अगर इड़ा नाड़ी में दोष होगा तो विचारों, स्मृतियों, वासनाओं और बुद्धि में दोष होगा। बुद्धि में दोष होने से मेधा में दोष होगा, स्मृति में दोष हो तो विवेक शक्ति में दोष होगा, क्योंकि इड़ा नाड़ी उनका उत्पादन केन्द्र है। यदि पिंगला नाड़ी में दोष होगा तो प्राणशक्ति में दोष होगा, कर्मेन्द्रियों में, सिर, आँखों, नाक, कफ-वात-पित्त में दोष होगा। बस यह समझ लो कि सर्वत्र दोष होगा। दैहिक बीमारियों का मुख्य कारण पिंगला नाड़ी के स्वास्थ्य पर निर्भर करता है। मानसिक व्याधियों का मुख्य कारण इड़ा-पिंगला नाड़ियों की स्थिति पर निर्भर करता है। यह बिलकुल पक्की बात है। इसमें दो मत हैं ही नहीं। हठयोग इसी को कहते हैं। इड़ा और पिंगला के स्वास्थ्य को एक-दूसरे के परिप्रेक्ष्य में देखना चाहिए।

हठयोग के अंग

हम भारतीय लोग, खासकर योग मार्ग वाले बड़े विचित्र होते हैं। हम विचार को विचार के द्वारा नियंत्रित नहीं करते हैं। हम सोचते हैं कि यह विचार कहाँ से पैदा हुआ। यह भोजन से पैदा हुआ या कहीं और से पैदा हुआ। सबसे पहले उसको शारीरिक स्तर पर परखते हैं, फिर दूसरे स्तर पर देखते हैं। शास्त्रों ने हठयोग में छः क्रियाएँ बतायी हैं। मैं उन्हें इस क्रम में कहता हूँ – षट्कर्म (नेति, धौति, बस्ति, कपालभाति, त्राटक, नौलि), आसन-प्राणायाम, उसके बाद धारणा-ध्यान और अंत में समाधि। यम-नियम को बाद में रखते हैं। मैं यम-नियम के विरुद्ध नहीं हूँ, मगर मुझे मालूम है कि उनको साधने में कठिनाई क्या है। तुमको भी मालूम है उनको साधने में कठिनाई क्या है। इस गद्दी पर बैठकर मैं यम-नियम की बातें तब तक नहीं करूँगा, जब तक मुझको यह स्वीकार नहीं हो जाये कि हाथ का खेल है या नहीं। मैं यम-नियम पर पहुँचा हूँ हठयोग के मार्ग से।

एक आदमी को अणुव्रत धारण करना है, वह महाव्रत भी धारण कर सकता है। उसकी नाड़ियाँ उसके साथ सहयोग कर रही हैं, उसके रस-रसायन उसके साथ सहयोग कर रहे हैं। जिस व्यक्ति के शरीर में विषाक्त तत्त्व जमा नहीं होंगे, उस व्यक्ति को रोग नहीं होंगे। पित्त के कारण कई समस्यायें उत्पन्न

होती हैं, लेकिन जिस व्यक्ति ने वमन धौति करके अपने पित्त को नष्ट कर दिया है, उसके शरीर में पित्तजन्य रोग कैसे पैदा हो सकते हैं? वस्त्र धौति करने वाले व्यक्ति के शरीर में कफ कैसे जमा हुआ रह सकता है? तुम नाली को साफ करो और कहो नाली में कचरा है, हम यह मानने के लिए तैयार नहीं हैं। अगर तुम्हारी नाली में कचरा है, तो तुम निश्चित रूप से झूठ बोल रहे हो कि तुम सफाई करते हो, तुमने नाली को साफ नहीं किया है। कफ, वात और पित्त, ये तीन चीजें जो आयुर्वेद में मानी जाती हैं, हम भी इनको स्वीकार करते हैं। हम केवल कफ को फेफड़े के अंदर स्वीकार नहीं करते। हम कफ को शरीर में व्याप्त एक तत्त्व के रूप में मानते हैं।

अब नेति क्रिया ले लो, बहुत छोटी-सी क्रिया है। अच्छी तरह सीखना, गुजारिश कर रहा हूँ, सीधे घर पर शुरू मत कर देना। उसमें थोड़े नियम-कायदे होते हैं। नेति केवल नाक को साफ नहीं करती, बल्कि यह वायुमण्डल की आयोनिक वायु को निकाल कर उसको मस्तिष्क में भेजती है। सूत्र-नेति, जल-नेति, घृत-नेति और तेल-नेति जैसी अनेक प्रकार की नेतियों का वर्णन आता है। मैंने मिरगी रोग के रोगियों को नेति क्रिया से अच्छा होते देखा है। प्राणायाम करने वाले के लिए नेति करना बहुत आवश्यक है। लोटे का नॉजल जो नाक के अन्दर जाता है, उसको नाक में एकदम फिट होना चाहिए, नहीं तो हवा जाती है और चोट मारती है। फिर लोग बोलते हैं, नाक में पानी घुस गया।

नेति, धौति, बस्ति, कपालभाति, त्राटक, नौलि – ये षट्कर्म देह के अंदर इतना व्यापक परिवर्तन ले आते हैं कि आप उसका अंदाज लगा नहीं सकते।

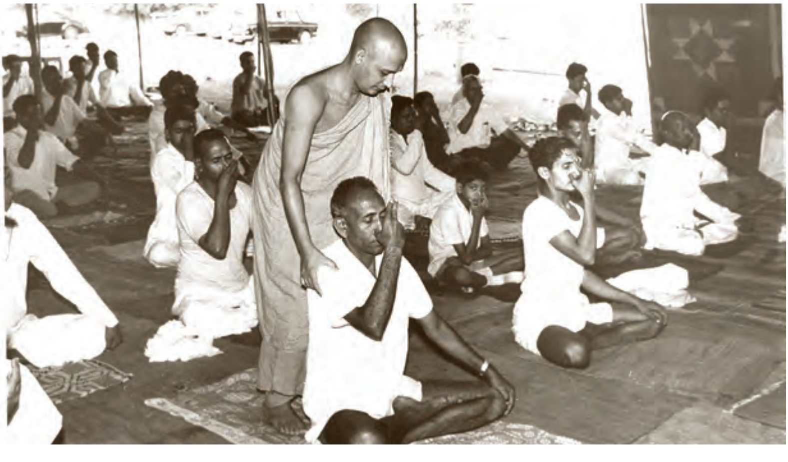

आपको एक बात दुबारा याद दिलानी है कि हठयोग को आप शारीरिक योग मत कहिये, कृपया हठयोग को हठयोग ही कहिये। यदि कहना हो, तो अधिक-से-अधिक यह कहिये – *चाँद सूरज दो बने मसालची, सुरत सुहागन नाच रही, सत महल में सारंगी बाज रही।*

ये चाँद और सूरज दो मशालची हैं। ये सारे शरीर के अंदर गड़बड़ करते रहते हैं। यदि इड़ा-पिंगला नाड़ियों को साध लिया गया है और दोनों में समन्वय स्थापित कर लिया गया है, तो ये नाड़ियाँ बाद में सुषुम्ना के जागरण में हमारी सहायता करती हैं। मूलाधार से इड़ा बायीं तरफ से और पिंगला दाहिनी तरफ से निकलती है। स्वाधिष्ठान में दोनों एक-दूसरे को पार करती हुई आगे जाती हैं। उसके बाद मणिपुर, अनाहत, विशुद्धि में ये दोनों एक-दूसरे को पार करती जाती हैं। ये दोनों नाड़ियाँ आज्ञा चक्र में पहुँच कर सुषुम्ना नाड़ी के साथ मिल जाती हैं, इसीलिए आज्ञा चक्र को त्रिवेणी कहते हैं। यह योगियों की त्रिवेणी है, जहाँ गंगा, यमुना और अन्तःसलिला सरस्वती का संगम होता है। योगी लोग बार-बार कुंभ के समय वहाँ जाते हैं, जब सूर्य कुंभ राशि में आता है। उस समय वहाँ जाकर स्नान करते हैं और डुबकी लगाते हैं। कई बार मुझको भी लोगों ने वहाँ जाने के लिए कहा। मैंने कहा, मैं तो रोज डुबकी लगाता हूँ।

कर्म, भ्रम, अघ और व्याधि, इन चारों का नाश खेचरी मुद्रा से होता है। खेचरी मुद्रा हठयोग में ही आती है। वज्रोली, सहजोली भी हठयोग में आती हैं। प्रत्येक व्यक्ति को इन चीजों को जानना चाहिए। खेचरी के लिए कहा गया है –

रस गगन गुफा में अजर झरै।
बिन बाजा झनकार उठै, जहँ समुझि परै ध्यान धरै।

गगन गुफा नासिका के अन्दर वह जगह है, जहाँ पर तुम लोग नेति का सूत्र डालते हो और उसको रगड़ते हो। उसके नीचे एक छोटी-सी ग्रंथि है और उस ग्रंथि का सम्बन्ध मस्तिष्क के कपाल मार्ग से होता है। यही वह जगह है जहाँ अमृत की उत्पत्ति होती है। योगशास्त्र में उसको बिन्दु विसर्ग बोलते हैं। जब जिह्वा को उल्टा जाता है, तब उस अमृत का स्पर्श होता है। जब हठयोग से शरीर पवित्र हो जाये, तब यह करना चाहिए, अन्यथा कुछ और भी हो सकता है। हमारे एक मित्र जमालपुर फैक्ट्री में थे। बहुत सालों तक वे खेचरी करते रहे। उनको कड़वाहट का अनुभव होने लगा, तो मुझसे बोले, स्वामीजी

मेरा तो मस्तिष्क कटु हो गया है। मैंने कहा, 'हठयोग की क्रिया तो की नहीं। तुम किसी आधे गुरु के चक्कर में पड़ गये, अब भुगतो।'

हम लोग क्रम से काम नहीं करते हैं। साधना के मार्ग में सबसे पहले हठयोग है। हठयोग राजयोग को उत्पन्न करता है, राजयोग को सिद्ध करता है। इसके परिणामस्वरूप अपने अंदर स्वतः शांति आने लगती है, शांभवी मुद्रा, अगोचरी मुद्रा, नासिकाग्र दृष्टि लगने लगती है – *यत्र यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधयः।* जहाँ-जहाँ मन जाता है, वहाँ-वहाँ पर शांति का अनुभव होने का मतलब क्या है? जैसे लोभी का मन जहाँ-जहाँ जाता है, वहाँ-वहाँ वही चीज देखता है। उसी प्रकार जहाँ-जहाँ योगी का मन जाता है, वहाँ-वहाँ उसको शांति का अनुभव होता है।

अब आसनों के बारे में भी कुछ बतलाना है, जो बहुत आवश्यक है। लोग शीर्षासन की बहुत शिकायत करते हैं। मैंने आपको बतलाया है कि यदि कोई एक आसन ऐसा है, जिसके बारे में कोई शिकायत नहीं आनी चाहिए, तो वह शीर्षासन है। शीर्षासन के बारे में मैंने जो अनुसंधान देखे हैं, पढ़े हैं और जो अनुभव किया है, वे इतने हैं कि सबको बता पाना सम्भव नहीं है। शीर्षासन करते समय मस्तिष्क के अन्दर वायु का संचार इतना तीव्र हो जाता है कि रक्तचाप की संभावना नहीं रहती है। हाँ, यह बात निश्चित है कि शीर्षासन को सिद्ध करने के लिए उसके जो नियम हैं, उनका पालन किया जाना चाहिए। मेरे कहने का अर्थ यह नहीं कि आप कल सबेरे से उसे शुरू कर दें। मेरे कहने का अर्थ यह है कि शीर्षासन पर आपने जो आरोप लगाया है, वह बेतुका है, बेबुनियाद है, अवैज्ञानिक और एकदम गलत है।

शीर्षासन मस्तिष्क में वायु संचार की क्रिया को तीव्र कर देता है। जैसे ही मस्तिष्क में रुधिर का संचरण होता है, मस्तिष्क वायु संचार के द्वारा उसकी गति को बढ़ा देता है। हमने देखा है, हम इसका वैज्ञानिक रूप आपके सामने प्रस्तुत कर सकते हैं। मैं जिस आसन का नाम ले रहा हूँ, यदि आप उस एक आसन को लें, तो आपकी आधी बीमारियाँ *हरि: ॐ तत्सत्* हो जायेंगी। शरीर की सारी बीमारियों का केन्द्र मस्तिष्क में है। दमा का हेड क्वार्टर मस्तिष्क में है, ब्रांच ऑफिस छाती में है। हार्ट अटैक का हेड क्वार्टर मस्तिष्क में है, ब्रांच ऑफिस छाती में है। पेप्टिक अल्सर का हेड क्वार्टर मस्तिष्क में है, ब्रांच ऑफिस पेट में है। जितनी भी बीमारियाँ हैं, उनकी जड़ यहाँ मस्तिष्क में है, ऊर्ध्वमूल। बाकी सब ब्रांच ऑफिस हैं। आप लोग केवल ब्रांच ऑफिस

में घूम आते हैं, हेड ऑफिस को कोई देखता नहीं। सचिव, प्रधानमंत्री, सब ऊपर बैठे रहते हैं, पार्लियामेंट यहाँ देहली में है।

शीर्षासन करने से मस्तिष्क का सिंचन होता है, ग्रंथियों का पोषण होता है, नाड़ियों को नवजीवन मिलता है। हृदय, घुटनों, पिण्डलियों, जांघ की मांसपेशियों, श्रोणी के अंगों एवं पेशियों, चयापचय के अवयवों और मूत्राशय को विश्राम मिलता है, यानि पूरे शरीर को विश्राम मिलता है। आज आपके सामने हठयोग का जो प्रदर्शन किया गया, वह केवल तमाशा नहीं था। वह हम लोगों के लिए एक मार्ग है, मैंने उसमें एक ही चीज जोड़ी है। मैं कहता हूँ कि हठयोग से हम अंतिम बिन्दु पर पहुँच सकते हैं।

हठयोग में शुद्धिकरण का एक अभ्यास शंखप्रक्षालन, अर्थात् वारिसार धौति है। घेरण्ड संहिता में कहा गया है –

वारिसारं परं गोप्यं देह निर्मलकारकम्।
साधयेत्तत्प्रयत्नेन देवदेहं प्रपद्यते॥

शंखप्रक्षालन शरीर को एकदम निर्मल बना देता है। सोलह गिलास पानी पीकर सोलह गिलास पानी निकाल दो, यही शंखप्रक्षालन है। आप मानिये या न मानिये, करके देखिये। जो मधुमेह के रोगी होते हैं, उनको सबसे पहले पूर्ण शंखप्रक्षालन कराया जाता है। उसके बाद चालीस, तीस या बीस दिनों तक, जितना उनसे हो सके, लघु शंखप्रक्षालन करना चाहिए और तब शिथिलीकरण की क्रियाएँ करनी चाहिए, जैसे शवासन, योग निद्रा, अन्तर्मौन, त्राटक और नादयोग। उसके बाद हलासन, पश्चिमोत्तानासन, कूर्मासन जैसे आसन करने चाहिए। कैसे ठीक नहीं होगा! हठयोग हमारे ऋषि-मुनियों का सर्वश्रेष्ठ विज्ञान है। इसको अंडर ग्रेजुएट कहने की कोई आवश्यकता नहीं है। खेचरी मुद्रा करो, उन्मनी की अवस्था में जाओ और न नीचे रहो, न ऊपर रहो; न बाहर में रहना, न अंदर में रहना; न दिन में रहना, न रात में रहना; न शरीर में रहना, न अंदर में रहना, जहाँ है वहीं रहना। इसको कहते हैं –

जहँ अधर डाली हंसा बैठा, चुगत मुक्ता हीर।
आनन्द-चकवा केलि करत है, मानसरोवर तीर॥

अधर डाली माने बीच में; हंसा माने जीवात्मा। क्या बढ़िया बात कह दी!

– 25 दिसम्बर 1978, ठाणे योग सम्मेलन

अजपाजप साधना

अजपाजप का अभ्यास ब्रह्मचारी भी कर सकते हैं और गृहस्थ भी, मद्यपान करने वाले भी कर सकते हैं और सात्त्विक लोग भी। इसका अभ्यास सब जगह किया जा सकता है। हम लोगों के यहाँ इस विद्या को अजपाजप कहा जाता है। जो जप अपने आप हो, वह अजपाजप है। तुम जो करते हो, उसको जप कहते हैं। तुम्हारा मन दिन को या रात को चलायमान रहता है या नहीं? उसको तुम चलायमान करते हो कि अपने आप वह चलायमान रहता है। हमारा मन अपने आप चलायमान रहता है। हम नहीं चाहते हैं, तो भी वह चलायमान रहता है। उसको रोकते हैं, तो भी चलायमान रहता है। उसको पिंजड़े में बन्द करते हैं, तो और सूक्ष्म रूप से वह निकल भागता है। उसको देखते रहो। कहते हैं, 'अरे! वह कहाँ चला गया।' वह बिलकुल पी.सी. सरकार की तरह जादूगर है, उसको जितनी अच्छी तरह से देखते हो, वह उतनी अच्छी तरह से भागता है।

हम लोग बचपन में ध्यान करते थे, हमको हमारे पण्डित जी कहते थे, 'चंद्रमा पर ध्यान करो।' जब हम ध्यान करते तब चन्द्रमा से मन कहीं और चला जाता था। गुरुजी पूछते थे, 'तुम्हारा मन कहाँ चला गया?' हमको तो पता ही नहीं कि मन कहाँ चला गया। जब देखा, तो वह घूमता-भागता पहुँच गया पिक्चर हाऊस या फुटबॉल ग्राउंड में। अब बड़े हो गये, हो सकता है कि अब नियंत्रण में आ जाये।

मन और प्राण

मन स्वाभाविक रूप से चलायमान रहता है। स्वाभाविक रूप से चलायमान मन जब व्यस्त रहता है, तब वह स्वाभाविक रूप से पकड़ में रहता है। दूसरी बात याद रखो, श्वास या प्राणों का असर मन पर पड़ता है और मन का प्राणों पर। दोनों एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। अगर तुम प्राणों को नियंत्रित करोगे, तो मन नियंत्रित होता है। अगर मन को नियंत्रित कर सको, तो प्राण नियंत्रण में आता है। अजपाजप में प्राणों के द्वारा मन को नियंत्रित किया जाता है। दिन में कभी भी बैठ जाओ और नासिका के अग्रभाग पर अपनी दृष्टि को स्थिर करो, इसको कहते हैं नासिकाग्र दृष्टि। जब नासिकाग्र दृष्टि करो, तब

उस समय तुमको श्वास का अन्दर जाना और बाहर आना साफ-साफ मालूम पड़ना चाहिए। इस अवस्था में श्वास तुमको स्पष्ट दिखलायी देगी। मात्र उसको देखते जाना है, कुछ करना नहीं है।

मैं श्वास लेता हूँ और मैं श्वास छोड़ता हूँ, ऐसा मालूम होना चाहिए। श्वास का तुम पीछा करो, उसको देखते जाओ। देखते-देखते कुछ दिनों के बाद तुमको इस श्वास के पीछे एक आवाज सुनाई देगी, जोर से नहीं, बल्कि एक अनुभव के रूप में। तुमको ऐसा मालूम पड़ेगा कि अन्दर जाने वाली श्वास में 'सो' और बाहर आने वाली श्वास में 'हं' की आवाज आ रही है। तुम सुनोगे नहीं, तुमको प्रतीत होगा कि श्वास में 'सोऽहं, सोऽहं' चल रहा है। यह अपने आप होता है। इसके लिए प्रयत्न करने की जरूरत नहीं। केवल श्वास को देखते जाओ। एक आसन में नहीं कर सको तो पाँच मिनट करो, फिर बाद में पाँच मिनट करो। यदि 10 मिनट आसन में बैठ सको तो 10 मिनट करो। यदि एक बार में नहीं कर सको, दो बार में करो, तीन बार करो, चार बार करो, पाँच बार करो। जोर लगाकर नहीं करना, सहज रूप से करना। यदि मन नकारात्मक उत्तर दे, तो नहीं करना, क्योंकि मन को तो दोस्त बनाना है न तुमको! अगर तुम पहले ही दिन झगड़ा कर लोगे, तो नदी में रहकर मगर से बैर करना ठीक नहीं होगा।

जीवन की जो समस्यायें हैं, उनका हल तुम केवल मन से करने जा रहे हो। मन ही समस्या है और मन ही समस्या का समाधान! जब तुमको मन

की समस्या का हल करना हो, उसके संकल्प से आगे बढ़ना हो, तो उसके साथ बैर करना ठीक नहीं है। मन कहता है, आज नहीं करना है। बोलो, ठीक है, आज नहीं करना है। तब कब करेंगे? बोलो, रात को करेंगे, मन कहेगा, ठीक है। मन बड़ा मजेदार है। अगर तुम उसे पटा सको, तो सब कुछ ठीक हो जायेगा। मन अगर पट गया, तो बिल्कुल आज्ञाकारी कुत्ते के समान हो जाता है। जो कहोगे सो करेगा और जब बिगड़ गया, तो यह भयंकर हो जाता है। भौंकता रहता है। इस मन को योगी लोग जानते हैं।

कुछ दिनों तक तुम श्वास को देखते जाओ, कुछ दिन में वृत्ति पलट जायेगी। जब वृत्ति पलट जाती है, तब 'सोऽहं' की जगह 'हंसो हंसो' चलने लगता है, इसको कहते हैं उलटा नाम। जब 'हंसो' होने लगे तब समझना तुम्हारा मन अन्दर होने लगा है। प्रत्याहार हो गया या हो रहा है, उस समय ध्यान शुरू करो।

ध्यान करने के लिये तीन केन्द्र होते हैं – भ्रूमध्य, नासिकाग्र और अनाहत। वैसे तो अन्य भी हैं, पर अभी मुख्य के बारे में बतलाता हूँ। जो भावनापूर्ण, भक्तिमार्ग वाले होते हैं, वे हृदय में ध्यान करते हैं। राजयोग वाले नासिकाग्र या भ्रूमध्य पर अपने मन को टिकाते हैं। जिस प्रकार धीरे-धीरे सूक्ष्मदर्शी यंत्र को फोकस करते जाते हैं, उसी प्रकार तुम्हारे मन को भी प्रोजेक्ट करना होता है। पहले उसका क्षेत्र बहुत बड़ा होता है, कुछ समय बाद उसे एक बिन्दु पर लाया जाता है। जैसे, ॐ बिन्दु है, ज्योति बिन्दु है, प्राण-रूप बिन्दु है, त्रिकोण बिन्दु है, कृष्ण का रूप बिन्दु है, गुरु का रूप बिन्दु है और देवी का रूप भी बिन्दु है। जब कोई प्रतीक जाग्रत होता है, उसको कहते हैं बिन्दु। कोई शब्द जो दिमाग में सुनाई देता है, उसको कहते हैं नाद।

आन्तरिक आयाम

नाद और बिन्दु, मन को टिकाने के लिए ये दो आधार हैं। मान लो, तुम्हारा बिन्दु शिवलिंग, ज्योति या कृष्ण का रूप है। उसको तुम भ्रूमध्य पर प्रत्यक्ष रूप से देखने की कोशिश करो। जो बाहर है, वही अन्दर दिखलाई देगा। बाहर में जो रूप दिखलाई देता है, वह तुम्हें इन्द्रियों से दिखलाई देता है। आँखें बंद करके जब तुम उसी रूप को देखते हो, तो वह अन्तःकरण से दिखता है, आत्मा से दिखता है। इसीलिए कहते हैं, 'बाहर के पट बंद कर अंदर के पट खोल।'

अंदर के पट को खोलने की दूसरी क्रिया होती है। जब तक यह अन्दर का पट नहीं खुलेगा, तब तक तुम्हारे भगवान केवल बाहर रहेंगे। यह इन्द्रियगम्य है,

आत्मगम्य नहीं। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि तुम आँखों से मत देखो। मेरे कहने का मतलब है कि इन शक्तियों को केवल इन्द्रियों से नहीं, बल्कि आत्मा से भी देखने की कोशिश करो। और, सब इसे कर सकते हैं। यह सरल क्रिया है।

अब इस अजपाजप को जब हम सिद्ध करते हैं, तब क्या होता है, इसके क्या लक्षण हैं? इसके बारे में गुरु गोरखनाथ ने एक पद लिखा है, इस पद को आप ध्यान से सुनो –

ऐसा जाप जपौ मन लाई, सोहं सोहं अजपा गाई॥
आसण दिढ करि धरौ धियानं, अहनिसि सुमरौ ब्रह्मगियानं।
जाग्रत न्यंद्रा सुलप अहारं, काम क्रोध अहंकार निवारं॥
नासा अग्र निज, ज्यौ बाई, इडा पिंगला मधि समाई।
छ सौं सहस इकीसौ जाप, अनहद उपजै आपहि आप॥
बंकनालि में उगै सूर, रोम-रोम धुनि बाजै तूर।
उलटै कमल सहस्त्रदल बास, भ्रमर गुफा महिं जोति प्रकास॥
सुणि मथुरा गोरख कहै, परम तत ते साधु लहै॥

बंकनाल का मतलब होता है रीढ़ की हड्डी। 'सूर' माने सूर्य और 'रोम-रोम धुनि बाजे तूर' का मतलब एक-एक रोम में आवाज की अनुभूति होने लगती है। सुनते हैं एक मुसलमान संत था, मनसूर, जो 'अनल-हक, अनल-हक' बोलता था। मुसलमान लोग बहुत नाराज होते थे, कहते थे कि यह काफिर है, अपने को खुदा बोलता है – मैं खुदा हूँ, मैं सब कुछ हूँ, मैं सत्य हूँ। उन्होंने कहा कि इसकी चमड़ी निकाल दो। लोगों ने उसको पीटते-पीटते उसकी चमड़ी निकाल दी, पर उस आदमी के एक-एक अंग से अनल-हक की आवाज आती थी। यही है, 'रोम-रोम धुनि बाजे तूर'। कबीरदास जी का एक पद है –

बंगला खूब बना महाराज, जिसमें नारायण बोले।
इस बंगले में दस दरवाजे, बीच पवन का खंभा।
आवत-जावत कोऊ नहीं देखा, यही एक अचम्भा।

यह जो पवन का खंभा है, इसको साधु लोग कमल की नाल कहते हैं। यह कमल की नाल है, सहस्रार कमल का फूल है और मूलाधार कमल की जड़ है। जब सुषुम्ना नाड़ी चलती है, तब इसमें प्रकाश आने लगता है।

अनहद नाद

अजपाजप का पुरस्कार क्या है? अनहद नाद। अजपाजप से सबसे पहले अनहद नाद की प्राप्ति होती है। अनहद नाद क्या है? नाद वह होता है, जिसकी एक हद होती है। अभी यह जो मैं बोल रहा हूँ, इसकी हद है, सीमा है और एक नाद होता है, अनहद। वह नाद मुँह से नहीं आता और न ही कान से सुनाई देता है। मगर जिसको साधु, संत और साधक लोग अन्दर सुनते हैं, उसी को कहते हैं अनहद नाद। वह अनहद नाद जब प्रकट होता है, तब संत-महात्मा उसको अलग-अलग ढंग से बतलाते हैं। कबीर का एक पद है –

घूँघट के पट खोल रे, तोहे पिया मिलेंगे॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, अनहद बाजत ढोल।

यहाँ पर अनहद की कल्पना उस महात्मा ने ढोल से की है। मगर ऐसा नहीं समझना कि केवल ढोल ही अनहद होता है। दूसरे संत दरिया साहब कहते हैं –

मुरली कौन बजावै हो, गगन-मण्डल के बीच ।
त्रिकुटी-संगम होय कर, गंग-जमुन के घाट ।
वा मुरली के शब्द से, सहज रचा बैराट ॥
गंग-जमुन बिच मुरली बाजे, उत्तर दिशि धुनि होहि।
वा मुरली की टेरहिं सुनि-सुनि, रहीं गोपिका मोहि ॥
जहँ अधर डाली हँसा बैठा, चुगत मुक्ता हीर ।
आनन्द-चकवा केलि करत है, मानसरोवर तीर ॥
शब्द-धुन मिरदंग बजत है, बारह मास बसन्त ।
अनहद् ध्यान अखण्ड आतुरवे, धारत सब ही सन्त॥
कान्हा-गोपी नृत्य करत हैं, चरन-वपुहि बिना ।
नैन बिना 'दरियावा' देखे, आनन्द-रूप घना ॥
मुरली कौन बजावै हो, गगन-मण्डल के बीच ॥

आखिर में वे कहते हैं – *शब्द-धुन मिरदंग बजत है*। उस अनहद नाद को शब्द कहते हैं। एक ध्वनि वह होती है जो हम बोल रहे हैं। यह आवाज है, यह शब्द नहीं है, क्योंकि मैं इसका उच्चारण कर रहा हूँ। इसका आदि है, इसका अंत है। पर मुँह तुम्हारा बंद हो जाए, मस्तिष्क बंद हो जाए, आँख बंद हो जाएँ, इन्द्रियाँ बंद हो जायें, हम तुम्हारे कान को भी बंद कर देते हैं,

तो भी शब्द सुनाई पड़ता है। उसको कहते हैं शब्द। गाना तो गाया जाता है, ध्वनि तो उच्चरित होती है और शब्द श्रवण किया जाता है। *शब्द-धुन मिरदंग बजत है* – अब देखो इसको मृदंग की उपमा देते हैं। मीरा बाई को अनुभव होता था कि –

सुनी री मैंने हरि आवन की आवाज।
महल चढ़ि जोऊँ मोरी सजनी कब आवै महाराज॥
दादुर मोर पपीहा बोलै कोइल मधुरै साज॥
उमग्यो इन्द्र चहुँ दिस बरसै, दामिन छोड़ी लाज॥
धरती रूप नवा नवा धरिया, इन्दग मिलन के काज॥
मीरा के प्रभु गिरधरनागर, बेग मिलो महाराज॥

यहाँ अभी अनहद नाद की बात हो रही है, ध्यान योग की नहीं। जैसे ही तुमको अनहद की ध्वनि सुनाई पड़ने लगे, तब समझ लेना कि तुम नजदीक पहुँचने लगे हो। आगे बोलती है, महल चढ़ि जोऊँ मोरी सजनी कब आवै महाराज। इसका मतलब छः मंजिलों वाला महल। आधार तल है – मूलाधार, पहली मंजिल – स्वाधिष्ठान, दूसरी मंजिल – मणिपुर, तीसरी मंजिल – अनाहत, चौथी मंजिल – विशुद्धि और पाँचवीं मंजिल है – आज्ञा,

तब जाकर सहस्रार आता है। जब तुम्हारे दरवाजे के सामने किसी आदमी के जूते की आवाज होती है, तब तुमको पता चलता है कि कोई आ रहा है। वैसे ही अपने अन्दर छुपी हुई भगवद् शक्ति का जब जागरण होने लगता है, तब उस समय कुछ लक्षण प्रकट होते हैं। यह लक्षण इस प्रकार बताया है, 'मुरली कौन बजावे हो गगन मण्डल के बीच'। दूसरी जगह बोलते हैं – शब्द-धुन मिरदंग बजत है, बारह मास बसन्त। अब तीसरे संत क्या बोलते हैं, 'बाजे अनहद ढोल'। और चौथे संत क्या बोलते हैं –

बरसे बदरिया सावन की। सावन की मन भावन की॥
सावन में उमग्यो मेरो मनवा। झनक सुनी हरि आवन की।
उमड़ घुमड़ चहुँ देस से आयो। दामिनी दमके झर लावन की॥
नन्ही नन्ही बूंदन मेघा बरसे। शीतल पवन सुहावन की।
मीरा के प्रभु गिरधरनागर॥

मतलब यह हुआ कि ध्यान की अवस्था में अजपाजप गहरा होता है और 'सोऽहं' पलटकर 'हंसो' हो जाता है – उलटा नाम जपत जग जाना, बालमीकि भये ब्रह्म समाना। वाल्मीकि बेवकूफ नहीं थे कि मरा-मरा बोलते। वे उलटा नाम जपते थे, उलटा नाम है – 'हंसो'। जब अजपाजप गहरा होता जाता है, उस समय साधकों को यह नाद सुनाई पड़ने लगता है और कई प्रकार के अनुभव होते हैं। यह अनुभव एक, दो, तीन नहीं, कितने ही प्रकार के होते हैं। यदि मैं इसका सामान्य विश्लेषण करूँ तो दिन-रात बीत जाये। केवल संतों के पद कहूँ तो रात-की-रात बीत जायेगी। किसी को लगता है कि चारों तरफ पानी-ही-पानी बरस रहा है। कहाँ पर था, मुझको याद नहीं, मैं बैठा था, लगा कि बड़े जोर से पानी बरस रहा है, मेरे चारों ओर पानी-ही-पानी है, मेरी गाड़ी भी पानी में है और मैं पानी से घिरा हूँ। बड़ा मजा आ रहा था उस समय। यही है, 'बरसे बदरिया सावन की'। शब्द क्या सुनाई पड़ता है, 'दादुर मोर पपीहा बोले, भनक पड़ी प्रिय आवन की' अर्थात् ध्यान की गहरी अवस्था में तुम्हें लगेगा कि तुम्हारे अन्दर ईश्वरीय शक्ति का, आत्मचेतना या दिव्य चेतना का जागरण हो रहा है।

जब मनोमय कोष खुलता है, तब उस समय अहंकार, काम, क्रोध इत्यादि का नाश हो जाता है। जब विज्ञानमय कोष खुलता है, तब साधक के पास गुणों का खजाना आ जाता है, अनेक प्रकार के अनुभव होते हैं।

अनहद नाद ईश्वर की आवाज है। वह आत्मा की आवाज है। इसको प्राप्त करने से प्राणी एकदम पवित्र हो जाता है, इसीलिए आज मैंने आप लोगों के सामने यह ध्यान की बात बताई। आप पूजा करते हो, बिल्कुल ठीक। आप रामायण पढ़ते हो, वह भी ठीक है। मगर एक बात याद रख लो, तुम्हारी अलमारी में कितनी ही मिठाइयाँ क्यों न रखी हों, जब तक तुम उनको खाओगे नहीं, उसका मजा नहीं आ सकता। तुम बोलते रहो कि इसमें हलुवा है, इसमें यह है, इसमें वह है, इसमें यह डाला है, इसमें वह डाला है, मुँह में पानी भर आयेगा, पर उतना मजा आयेगा नहीं। साधना की बात तुम कितनी ही सुनो, पर बात, बात ही होती है।

इस देश के हम सब निवासी मूलतः साधक हैं। मैं एक या दो की बात नहीं बोल रहा हूँ, मैं इस देश के सभी निवासियों की बात बोल रहा हूँ। यह धरती साधकों की है, मगर आज हम लोगों को इस मार्ग से वंचित किया जा रहा है, हम इस मार्ग से वंचित होते जा रहे हैं। आप लोगों के लिए सब चीजों की सुविधा है, मगर साधना के मार्ग की सुविधा नहीं है। इस देश के निवासियों का खान-पान, रहन-सहन, सब कुछ साधना के उपयुक्त है। तुम लोगों को ज्यादा बदलने की जरूरत नहीं है, दूसरे देश के लोगों को मैंने देखा है। उनको बड़ी मुश्किल से साधना के मार्ग में लाया जाता है। यहाँ सब कुछ ठीक है, केवल तुम्हें उस राह पर चलना है। आज इस देश के निवासी जिस संस्कृति को छोड़ते जा रहे हैं, सारी दुनिया आज उसी संस्कृति को अपनाने की कोशिश कर रही है। सारी दुनिया जिस संस्कृति से सम्बन्ध-विच्छेद करना चाह रही है, आज हिन्दुस्तान उसको स्वीकार करना चाह रहा है।

मैं दो प्रयोजन लेकर संन्यस्त हुआ हूँ, जिनमें एक है – मनुष्य को ध्यान की पूर्ण प्राप्ति के लिए योग का अभ्यास कराना। किसी भी प्रकार का भोग हो, हम उसका विरोध नहीं करने जा रहे हैं और करते भी नहीं हैं। जीवन को समर्थ रूप से प्राप्त करने के लिए योग के द्वारा अपनी इन्द्रियों को कुशाग्र बनाओ, संवेदनशील बनाओ। योग को अपने परिवार की संस्कृति का रूप दो। इसके बारे में सब लोगों को विचार करना चाहिए। अगर यह संस्कृति हमारे परिवारों में नहीं रही, हमारे देश में नहीं रही, तो दुनिया को मार्गदर्शन कोई नहीं दे सकता। बड़े-बड़े लोग दुनिया का मार्गदर्शन नहीं कर सकते। दुनिया का मार्गदर्शन योग की पूर्णावस्था को प्राप्त व्यक्ति ही कर सकता है।

– 10 जुलाई 1979, अग्रसेन भवन, गोंदिया

दान सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

आश्रम के लिए दान राशि केवल निम्नलिखित श्रेणियों के अन्तर्गत स्वीकार की जाएगी –

1. **सामान्य दान**
   जो बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन को दिया जा सकता है और जिसका उपयोग यौगिक गतिविधियों के विकास एवं संवर्द्धन के लिए किया जाएगा।

2. **मूलधन निधि के लिए दान**
   बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन की मूलधन निधि के लिए। **मूलधन निधि** से प्राप्त ब्याज राशि का उपयोग संस्था/न्यास की सभी गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

3. **सी.एस.आर. दान**
   जिसका उपयोग सी.एस.आर. गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

इसलिए भक्तों से निवेदन है कि वे केवल उपर्युक्त श्रेणियों के अन्तर्गत अपनी दान राशि भेजें।

बिहार स्कूल ऑफ योग को दान 'SB Collect Online Donation Facility' के माध्यम से निम्नलिखित वेबसाइट द्वारा सीधे दिया जा सकता है – **https://www.onlinesbi.sbi/sbicollect/icollecthome.htm?corpID=2277965**

आप चेक, डी.डी. अथवा ई.एम.ओ. द्वारा भी दान दे सकते हैं जो **बिहार स्कूल ऑफ योग**, **बिहार योग भारती**, **योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट** या **योग रिसर्च फाउण्डेशन** के नाम से हो और मुंगेर में देय हो।

दान राशि के साथ एक पत्र संलग्न रहे जिसमें आपके दान का प्रयोजन, डाक पता, फोन नम्बर, ई-मेल और PAN नम्बर स्पष्ट हों।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

रिखियापीठ सत्संग – भाग 6

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

पृष्ठ 218, ISBN: 978-81-946102-8-1

यह पुस्तक श्री स्वामीजी द्वारा रिखियापीठ में जनवरी से मार्च 1998 के बीच दिये गये सत्संगों का संकलन है, जिनमें उन्होंने अध्यात्म विद्या, भगवद् भक्ति, योग, संन्यास परम्परा, सेवा, आरोग्य, ग्रामीण विकास, पौराणिक इतिहास, महिला-कल्याण तथा अर्थशास्त्र जैसे अनेक प्रासंगिक विषयों पर अपना मौलिक चिंतन प्रस्तुत किया है। श्री स्वामीजी के व्यावहारिक तथा प्रेरक विचार जीवन में प्रकाश खोजते सभी जिज्ञासुओं को एक नयी दिशा और ऊर्जा प्रदान करते हैं।

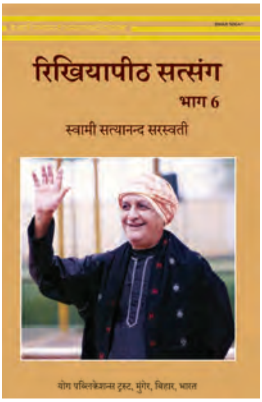

नया प्रकाशन

पुस्तकों की मूल्य सूची एवं क्रयादेश प्रपत्र प्राप्त करने के लिए सम्पर्क करें –

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201
दूरभाष : 91–6344–222430, 9162783904

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

बिहार योग परम्परा की समस्त प्रकाशित कृतियाँ *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर तथा *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में प्रस्तुत हैं।

यौगिक जीवनशैली साधना

biharyoga.net तथा *satyamyogaprasad.net* पर स्वस्थ जीवन हेतु यौगिक जीवनशैली साधना उपलब्ध है।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं

- Registered with the Department of Post, India
  Under No. MGR-01/2020-23
  Office of posting: Ganga Darshan TSO
  Date of posting: 1st-7th of every month
- Registered with the Registrar of Newspapers, India
  Under No. BIHHIN/2002/6306

issn 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2023

बिहार योग विद्यालय योगविद्या प्रशिक्षण

जुलाई 2022–जुलाई 2024	आश्रम जीवन प्रशिक्षण
जुलाई 1–दिसम्बर 31	योग चक्र अनुभव
सितम्बर 20–28	हठ योग एवं कर्म योग प्रशिक्षण
अक्टूबर 4–12	राज योग एवं भक्ति योग प्रशिक्षण
अक्टूबर 15–29	प्रगतिशील योग विद्या प्रशिक्षण
नवम्बर 20–29	क्रिया योग एवं ज्ञान योग प्रशिक्षण

बिहार योग भारती योगविद्या प्रशिक्षण

अप्रैल 15–जून 15	द्विमासिक यौगिक अध्ययन (अंग्रेजी)
अगस्त 7–अक्टूबर 7	द्विमासिक यौगिक अध्ययन (हिन्दी)

कार्यक्रम

नवम्बर 4-12	मुंगेर योग संगोष्ठी 2

मासिक कार्यक्रम

प्रत्येक शनिवार	महामृत्युंजय हवन
प्रत्येक एकादशी	भगवद् गीता पाठ
प्रत्येक पूर्णिमा	सुन्दरकाण्ड पाठ
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	गुरु भक्ति योग
प्रत्येक 12 तारीख	अखण्ड रामचरितमानस पाठ